UNIT–II

2

अनुसंधान समस्या का प्रतिपादन
[Formulation of Research Problem]

2.1 समस्या की पहचान के स्त्रोत
(Sources of Identifying the Problem)

प्रश्न 1. अनुसंधान या शोध समस्या के चुनाव पर एक निबंध लिखो।
(Write a note on selection of Research Problem.)

अथवा

अनुसंधान समस्या को परिभाषित कीजिये तथा इसके स्त्रोत एवं लक्षणों की व्याख्या कीजिए।
(Define Research Problem and discuss its source and characteristics.)

अथवा

(M.D.U. 1st Sem. 2013)

समस्या चुनने के विभिन्न सिद्धान्तों की व्याख्या करो।
(Discuss different principles of selecting a problem.)

उत्तर–मनुष्य अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए विभिन्न साधनों को अपनाता है। यदि उसकी सन्तुष्टि उपलब्ध साधनों [illegible] नहीं होती तो एक समस्या उत्पन्न हो जाती है। इसका अर्थ यह हुआ कि, "आवश्यकता की संतुष्टि के लिए साधनों या मार्ग [illegible] ही समस्या है"–जैसे समस्या समाधान के साधन खोज के लिये जाते हैं आवश्यकता की संतुष्टि हो जाती है और समस्या [illegible] हो जाता है। समस्या की गंभीरता आवश्यकता की गहनता एवं साधनों की उपलब्धि पर निर्भर करती है। सामाजिक अनुसंधान [illegible] का चयन एवं उसका प्रतिचयन सामाजिक अनुसंधान की सफलता के लिये आवश्यक हैं।

जॉन सी. टाउनसैड के अनुसार, **"समस्या तो समाधान के लिये प्रस्तावित प्रश्न है।"**

फ्रेड एन. कलिंगर के अनुसार, **"समस्या एक प्रश्नवाचक वाक्य अथवा विवरण है जिसमें दो या दो से अधिक चल राशियों में [illegible] सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है।"**

अनुसंधानकर्ता इसी प्रश्न का उत्तर प्राप्त करने का प्रयास करता है तथा चल राशियों में सह-सम्बन्ध ज्ञात करता है तब उसे [illegible] कहा जाता है।

समस्या का चयन (Selection of Problem)–सामाजिक अनुसंधान में समस्या का चयन का विशेष महत्त्व है। **जहोदा एवं [illegible] ने इस संदर्भ में कहा है कि "वैज्ञानिक खोज एक ऐसा कार्य है जो समस्याओं के समाधान की ओर परिचालिक होता है।"** [illegible]tific Inquiry is an understanding geared to the solution of problem) **कोहने एवं नगेल** ने कहा है कि **"जब [illegible] कोई समस्या नहीं होती तब तक अनुसंधान का प्रश्न ही नहीं उठता। उन्हीं के अनुसार, "यह विचार पूर्णतया थोथा है, केवल [illegible] के अध्ययन से सत्य का पता लगाना चाहिए। यह विचार इसलिये थोथा है क्योंकि जब तक व्यापारिक अथवा सैद्धान्तिक परिस्थिति [illegible] किसी कठिनाई का अनुभव नहीं किया जाता तब तक कोई भी खोज आरम्भ ही नहीं हो सकती। कठिनाई अथवा समस्या [illegible] में किसी न किसी ऐसी अवस्था की हमारी खोज को निर्देशित करती है जिसके संदर्भ में उस कठिनाई को दूर किया जाता [illegible]** It is an utterly superficial view, that the truth is to be find by studying the facts. It is superficial [illegible]se no inquiry can ever get under way until and unless some difficulty is feel in a practical or [illegible]etical situation, it is difficulty or problem, which guides our search for some order among the [illegible] in terms of which the difficulty is to be removed.) उपरोक्त कथनों के आधार पर कहा जा सकता है कि अनुसंधान [illegible] का चयन अत्यन्त महत्त्वपूर्ण चरण है।

समस्या चयन के सामान्य सिद्धान्त
(General Principles of Selection of Problem)

ये निम्नलिखित हैं–

1. **समस्या नयी होनी चाहिए (Problem should be new)**–इसके लिए समस्या के विषय से सम्बन्धित पहले हो चुके अनुसंधान कार्य को देखकर तथा उनके विशेषज्ञ से बातचीत करने पर पता चल जाता है कि समस्या नयी है या नहीं।
2. **समस्या अनुसंधानकर्ता की रुचि के अनुसार होनी चाहिए (Problem should be according to interest of researcher)**–अगर समस्या अनुसंधानकर्ता की रुचि के अनुकूल न होगी तो वह उस पर सही प्रकार से कार्य नहीं कर पायेगा। अगर यह समस्या अनुसंधानकर्ता की इच्छा की होगी तो व शोधकार्य के बाद भी इस क्षेत्र में कार्य करता रहेगा।
3. **समस्या की व्यावहारिक उपयोगिता का होना आवश्यक है (Problem should be practically useful)**–किसी समस्या का अनुसंधान के द्वारा समाधान करने का कारण है कि वह समस्या फिर कभी भविष्य में समाजशास्त्र के क्षेत्र में किसी प्रकार का अवरोध उत्पन्न न कर सके और शोधकर्ता भी उससे लाभ प्राप्त कर सके।
4. समस्या श्रम, धन एवं समय की आवश्यकता एवं क्षमता के अनुरूप होनी चाहिए।
5. समस्या ऐसी होनी चाहिए कि उसके आंकड़ों के प्राप्त होने की संभावना हो, वही क्षेत्र चुनना चाहिए जिसमें आंकड़े एकत्रित करने में मुश्किल न हो।
6. **अनुसंधानकर्ता की योग्यता (Ability of Reseach)**–समस्या अनुसंधानकर्ता की योग्यता के अनुरूप होनी चाहिए।

अनुसंधानकर्ता को किसी समस्या का चयन करते समय स्वयं से **निम्नलिखित** प्रश्न करने चाहिएं–

1. अनुसंधान समस्या के विषय में उसकी जानकारी कितनी है?
2. इस जानकारी के विभिन्न स्त्रोत क्या हैं और उसकी विश्वसनीयता एवं प्रमाणिकता की सीमा क्या है?
3. हम इस उपलब्ध जानकारी की पृष्ठभूमि में यदि कोई हो क्या जानकारी प्राप्त करना चाहते हैं और क्यों यह जानकारी प्राप्त चाहते हैं?
4. जिस प्रकार की जानकारी हम प्राप्त करना चाहते हैं इसकी प्राप्ति किन-किन स्त्रोतों एवं साधनों का प्रयोग करते हुए हो सकती है?
5. जिस प्रकार की जानकारी हम प्राप्त करना चाहते हैं इस पर कितने समय, धन एवं प्रयासों के व्यय की आवश्यकता होगी एवं क्या इस व्यय के अनुरूप हमें परिणाम प्राप्त हो सकेंगे?
6. जो जानकारी हम प्राप्त करना चाहते हैं उसकी प्राप्ति के लिये किये जाने वाले प्रयासों का मार्गदर्शक किस प्रकार की मान्यताओं एवं परिकल्पनाओं द्वारा किया गया जायेगा।
7. क्या इन परिकल्पनाओं के अन्तर्गत प्रयुक्त किये जाने वाले चरों, अवधारणाओं इत्यादि की स्पष्ट परिभाषा उपलब्ध हो सकेंगी और प्रौद्योगिकी दृष्टिकोण से उपयुक्त होगी?
8. इसके अलावा जानकारी से, जिनकी हम प्राप्ति करना चाहते हैं कितने लोग लाभान्वित हो सकते हैं?

यदि इन सभी प्रश्नों के उत्तर हाँ में मिलें तो वह समस्या अच्छी होगी तथा उस पर कार्य आरम्भ किया जा सकता है।

समस्या के स्त्रोत
(Sources of Problem)

समस्या के चुनाव के **निम्नलिखित** स्त्रोत हैं–

जे.सी. एल्माक ने समस्या के **निम्नलिखित** स्त्रोत बताये हैं–

1. ऐतिहासिक अभिलेखों द्वारा।
2. आधारपूर्ण क्षेत्र को ढूँढ़ना।
3. ऐसे निष्कर्षों की जाँच करना जो सही नहीं थे।
4. विषय से सम्बन्धित गोष्ठी को विकसित करना।

गुडे, बार एवं स्केटस के अनुसार–

1. विशेष अध्ययन (Special Study)
2. अध्ययन कार्यक्रम (Study Programme)
3. ज्ञान के किसी क्षेत्र का विश्लेषण (Analysis of area of Knowledge)
4. वर्तमान क्रियाओं एवं आवश्यकताओं पर प्रचार (Consideration of Existing Practice and Needs)
5. अनुसंधान की पुनरावृत्ति एवं प्रसार (Repetition and Expansion of Research)
6. अध्ययन के अन्तर्गत विभिन्न क्षेत्र (Different areas under Study)

उपरोक्त के आधार पर निम्नलिखित अनुसंधान समस्या के स्त्रोत होते हैं–

1. **अनुसंधान के लिये क्षेत्र का निर्धारण (Determining the areas of field of Research)**–अनुसंधानकर्ता को सबसे [illegible] क्षेत्र का निश्चय करना होगा कि हमें इस विषय के इस क्षेत्र में यह कार्य करना है। यह निश्चय उस क्षेत्र में उसकी विशेष अभिरुचि [illegible] पर निर्भर करता है।

2. **सम्बन्धित साहित्य का अध्ययन (Study of Related Literature)**–क्षेत्र के निर्धारण के बाद उसे सम्बन्धित साहित्य [illegible]-पुस्तक, पत्र-पत्रिकाएं, पहले किये अनुसंधानों की रिपोर्ट का अवलोकन किया जाता है।

3. **अनुसंधानकर्ता एवं प्राध्यापक का सम्पर्क (Contact between the Researcher and Lecturer)**–प्राध्यापक का [illegible] ज्ञान, कार्य, शैली, व्यक्तित्व एवं रुचि का प्रभाव छात्र में एक साथ जिज्ञासा एवं उत्तेजना उत्पन्न करते हैं।

4. **वर्तमान कार्यों का वैज्ञानिक निरीक्षण (Scientific observation of Existing Practices)**–वर्तमान कार्य पद्धति का [illegible] निरीक्षण भी अनुसंधानकर्ता में समस्याओं के प्रति समझ पैदा करेंगे और उसमें रुचि भी विकसित करेगा।

5. **अनुसंधानकर्ता का स्वयं का अनुभव (Researcher's own Experience)**–अनुसंधानकर्ता अगर जिज्ञासु है तथा सजग [illegible] कार्य करने वाला है एवं उसका वैज्ञानिक दृष्टिकोण है तो उसका स्वयं का अनुभव भी अनुसंधान के लिये विभिन्न समस्याएं [illegible] करता है।

6. **पहले किये गये कार्य की पुनरावृत्ति (Repetition of Previous Work)।**

7. **विशेषज्ञ के विचार (Idea of Specialists)।**

[illegible] समस्या की विशेषताएं
[illegible]teristics of Research Problem)

[illegible] का चयन करते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि उसमें निम्नलिखित विशेषताएं होनी चाहिएं–

1. समस्या स्पष्ट (Explicit) तथा मूर्त (concrete) हो।
2. समस्या समाधान योग्य हो। वैज्ञानिक दृष्टिकोण से केवल उन्हीं समस्याओं का अध्ययन किया जा सकता है। जिसका समाधान सम्भव है।
3. समस्या के लिये उचित परिकल्पना बन सके तभी उसका हल संभव है।
4. समस्या अनुसंधानकर्ता की रुचि के अनुरूप होनी चाहिये।
5. समस्या ऐसी होनी चाहिये जिसके समाधान से समाज को लाभ होना चाहिए।
6. समस्या ऐसी हो कि उसके आँकड़े आसानी से मिल सकें।
7. समस्या के अध्ययन में अधिक समय, एवं धन अधिक खर्च न हो।
8. समस्या सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक दृष्टि से उपयोगी होनी चाहिये।
9. समस्या वही हो, जिसका मापन और मूल्यांकन सरलता से हो सके।

[illegible] समस्या का प्रतिपादन
[illegible]ation of research problem)

[illegible] समस्या के विभिन्न अंगमूर्तों को पहचानना जरूरी होता है।

आर. एल. ऐकाफ ने अपनी पुस्तक **'दि डिजाइन ऑफ सोशल रिसर्ज'** ने निम्नलिखित अंगभूतों का वर्णन किया है–

1. **अनुसंधान उपभोक्ता**–ऐसी श्रेणी में उन व्यक्तियों को शामिल किया जाता है जो प्रत्यक्ष रूप से तथा अप्रत्यक्ष रूप से अनुसंधान से प्रभावित होंगे।
2. **अनुसंधान के उद्देश्य**–उद्देश्यों के आधार पर समस्या विशुद्ध, व्यावहारिक एवं क्रिया अनुसंधान के रूप में देखा जा सकता है स्पष्ट उद्देश्यों के फलस्वरूप अनुसंधानकर्ता को प्राथमिकता तय करने एवं समस्या के समाधान खोजने में सहायता मिलती है। स्पष्ट उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये प्रश्नावली, गहन, साक्षात्कार, गोष्ठी, व्यवहार सम्बन्धी ढंग तथा सूचना प्रदान करने वाले व्यक्तियों का प्रयोग किया जाता है।
3. **विकल्पीय साधन**–किसी भी समस्या के समाधान के लिये अनेक साधनों का प्रयोग किया जाता है। अनुसंधानकर्ता सभी साधनों का अध्ययन कर समस्या के समाधान के लिये सबसे उपयुक्त साधन का उपयोग करता है।

विकल्पीय साधन की कुशलता–कुशलता के परिमापन हेतु सामान्यतः **निम्नलिखित** कसौटियाँ प्रयोग में लाई जाती हैं–

1. समस्या को स्थिर रखते हुए पूर्ण किये गये कार्य का प्रतिशत ज्ञात किया जाये।
2. लागत को स्थिर रखते हुये पूर्ण किये गये कार्य का प्रतिशत निकाला जाये।
3. प्रयासों को स्थिर रखते हुए पूर्ति में लगने वाले समय को निकाला जाये।
4. पूर्ण किये जाने वाले कार्य को विस्तृत विवरण दर्शाते हुए पूर्ति में लागत वाली लागत की गणना की जाये।
5. पूर्ण किये जाने वाले कार्य का विस्तृत प्रस्तुत करते हुये इसकी पूर्ति में लगने वाले प्रयासों का अनुमान लगाया जाये।

पर्यावरण (Environment)–इससे अभिप्रायः उस परिस्थिति से है जिसके अंतर्गत हम समस्या का अध्ययन करना चाहते हैं। पर्यावरणों में होने वाले परिवर्तन अनुसंधान समस्या की प्रकृति एवं इसके स्वरूप को परिवर्तित करते हैं। उदाहरण के लिये भाग लेने वाले कार्यकताओं, उद्देश्यों इसकी प्राप्ति के साधनों आदि में परिवर्तन ला सकते हैं।

समस्या प्रतिपादन के चरण (Steps of problem formulation)–ये निम्नलिखित हैं–

1. चयनित शीर्षक के क्षेत्र के अंतर्गत समस्या का उचित प्रत्यक्षीकरण एवं इसकी स्पष्ट पहचान (Identification Reception)।
2. समस्या की खोजी प्रकृति की जानकारी एवं इसका स्पष्टकीकरण।
3. अनुसंधान समस्या के क्षेत्र का परिसीमन ताकि समस्या आसानी से संभाली जा सके।
4. अनुसंधान समस्या से सम्बन्धित विभिन्न मान्यताओं तथा परिकल्पनाओं का विस्तृत विवरण।
5. अनुसंधान समस्या के बाद आनेवाले सभी पक्षों का स्पष्ट विवरण।

जहोदा एवं **साथियों** ने इस संदर्भ में लिखा है, **"प्रतिपादन प्रक्रिया के दौरान अनुसंधान कार्यरीति के बाद में आने वाले चरणों की उम्मीद की जाने की आवश्यकता है ताकि यह आश्वासन प्रदान किया जा सके कि समस्या का प्रतिपादन इस तरीके से किया गया है जिसके साथ कार्य उपलब्ध प्रविधियों के साथ किया जा सकता है। यह उम्मीद वैज्ञानिक एवं प्रायोगिक चरणों से सम्बन्धित है। सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि समाजशास्त्री को अपने दिमाग में यह बात हमेशा ध्यान में रखनी चाहिये कि प्रतिपादन कभी भी समाप्त न होने वाली प्रक्रिया है जो पूछताछ के सभी चरणों में व्याप्त होती है।"**

प्रश्न 2. शोध समस्या के चुनाव की क्या आवश्यकता है? शोध विषय का चयन करते समय ध्यान देने योग्य बातों का उल्लेख कीजिये।

अथवा

शोध समस्या के चुनाव की क्या आवश्यकता है? शोध समस्या के विषय में शोधकर्ता के गुणों का उल्लेख कीजिये।

अथवा

एक अनुसंधान समस्या के चुनाव व निर्माण में विचारणीय व्यावहारिक बातें क्या हैं? **(M.D.U. 20**

अथवा

एक उदाहरण द्वारा समझाइए कि एक शोध समस्या को कैसे चुना तथा परिभाषित किया जाता है? **(K.U.K. 20**

उत्तर–समस्या के चयन की आवश्यकता (Need of Selection of Problem)–समस्या के चयन की निम्नलिखित कारणों से आवश्यकता पड़ती है–

1. वैज्ञानिक विधियों के द्वारा अध्ययन (Study by Scientific Method)–विषय एवं समस्या का चुनाव करते समय ध्यान रखना चाहिये कि उसका अध्ययन वैज्ञानिक विधियों के द्वारा किया जा सके।

2. विस्तृत क्षेत्र (Wide Sphere of Problem)–शोध के लिये चुनी जानी वाली समस्या का क्षेत्र सीमित न होकर विस्तृत या फैला हुआ होना चाहिये अधिक विस्तृत क्षेत्र भी लाभदायक नहीं होता।

3. **सामग्री की उपलब्धता (Availability of Matter)**–ऐसे विषय का चुनाव करना चाहिये जिसके अध्ययन में आवश्यक सामग्री आसानी से प्राप्त हो सके। कई बार विषय का चुनाव तो कर लेते हैं परन्तु उसके अध्ययन के लिये जब सामग्री की आवश्यकता होती है तो प्राप्त नहीं हो पाती, इस कारण शोध कार्य सफल नहीं हो पाता।

4. **समस्या की उपयोगिता (Utility of Problem)**–जिस समस्या को शोध के लिये चुना गया है क्या समाज को उससे कोई लाभ मिलेगा, अर्थात् उसी समस्या को शोध के लिये चुनना चाहिये जो समाज के लिये महत्त्वपूर्ण तथा लाभदायक हो।

5. **समस्या के निश्चित पहलू पर आधारित (Based on Fixed Aspect)**–जिस विषय का चुनाव किया गया है वह समस्या किसी पहलू या भाव पर आधारित होना चाहिये। अधिक विस्तार भी लाभदायक नहीं होता।

6. **समस्या का व्यावहारिक होना (Practically of Problem)**–समस्या ऐसी होनी चाहिये जो मूर्त विधि एवं सामग्री की दृष्टि से व्यावहारिक हो। किसी भी सामाजिक शोध का मुख्य उद्देश्य सामाजिक वास्तविकता का पता लगाना है। अगर समस्या व्यावहारिक नहीं है तो अध्ययन के मुख्य उद्देश्य की प्राप्ति सम्भव नहीं हो पायेगी।

शोध विषय के चेयन में ध्यान रखने वाली बातें
(Points to be Kept in view while Selecting a Research Topic)

शोध विषय का चयन करते समय निम्नलिखित बातें ध्यान में रखनी अनिवार्य हैं–

1. ऐसा विषय चुनना चाहिये जिसके बारे में पहले भी कुछ प्रारम्भिक जानकारी हो। **श्रीमती पी.बी. यंग** का परामर्श भी यही है कि विषय का प्रारम्भिक ज्ञान होने से शोध के कई पक्षों में सुगमता रहती है। जैसे कि तकनीकों तथा विधियों का चयन।
2. ऐसे विषय का चुनाव होना चाहिये जिसका अध्ययन या शोध पहले न किया गया हो तभी शोध कार्य का महत्त्व बढ़ता है।
3. **ऑगबर्न** के अनुसार : कभी भी अस्पष्ट विषय का चुनाव नहीं करना चाहिये। स्पष्ट विषय के अध्ययन में कठिनाई नहीं आती।
4. शोध विषय ऐसा होना चाहिये जिसके अध्ययन में आवश्यक सामग्री आसानी से उपलब्ध हो सके।
5. ऐसे विषय का चुनाव नहीं करना चाहिये जो शोधकर्ता की भावनाओं से जुड़ता हो, क्योंकि इससे पक्षपात की सम्भावना बढ़ जाती है। जिससे परिणाम में वस्तुनिष्ठता के बजाय व्यक्तिनिष्ठता की झलक आ जाती है।
6. शोध विषय का क्षेत्र निश्चित करते समय ध्यान रखना चाहिये कि क्या उस पूरे क्षेत्र का अध्ययन शोधकर्ता के लिये सम्भव है या नहीं।
7. **किम्बाल यंग** ने शोध की इकाइयों को निश्चित करने पर अधिक बल दिया है।
8. शोध कार्य में प्रयोग में आने वाली विधियों को भी ध्यान से निश्चित करना चाहिये।
9. सूचनादाताओं तक पहुँचने के बारे में भी पहले ही सोचना चाहिये।
10. **एकाफ (Ackolf)** ने यह सुझाव दिया है कि शोध कार्य शुरू करने से पहले ही पूर्व अध्ययन (Pilot study) कर लेनी चाहिये।
11. यदि शोध कार्य में शोधकर्ता के अतिरिक्त व्यक्तियों की आवश्यकता पड़ती है तो उनको प्रशिक्षित करना आवश्यक है।
12. शोधकर्ता की रुचि भी सफलता का आधार होती है। अगर स्वयं शोधकर्ता ही शोध कार्य से लगाव नहीं रखता तो वह कार्य को बीच में ही छोड़ सकता है।
13. शोध का समय भी निश्चित होना चाहिये और समस्या के चुनाव के समय यह भी सोचना चाहिये कि क्या वह कार्य निश्चित समय और उपलब्ध धन में पूर्ण हो जायेगा या नहीं।
14. शोध समस्या को परिभाषित भी करनी चाहिये कि किस प्रकार का अध्ययन कार्य होना चाहिये।

शोध समस्या के विषय में शोधकर्ता के गुण
(Qualities Required in a Social Investigation in Research Problem)

शोध करने वाले शोधकर्ता में कई प्रकार के आवश्यक गुण होने चाहिएं जैसे :

1. शोधकर्ता की शोध कार्य में रुचि होनी चाहिये। जब तक शोध कार्य में रुचि नहीं होगी तब तक शोध समस्या के विषय में किये गये कार्य में सफलता प्राप्त नहीं हो सकती।

प्रश्न 6. अनुसंधान समस्या के प्रतिपादन या निर्माण पर संक्षेप में प्रकाश डालिए।

अथवा

अनुसंधान समस्या से सम्बन्धित मुख्य अंग भूतों को संक्षेप में स्पष्ट कीजिए।

उत्तर–**अनुसंधान समस्या का प्रतिपादन (Formulation of research problem)**–अनुसंधान समस्या के विभिन्न अंगभूतों का [illegible] जरूरी होता है। आर. एल. ऐकाफ ने अपनी पुस्तक **'दि डिजाइन ऑफ सोशल रिसर्ज'** ने निम्नलिखित अंगभूतों का [illegible] है–

1. **अनुसंधान उपभोक्ता**–ऐसी श्रेणी में उन व्यक्तियों को शामिल किया जाता है जो प्रत्यक्ष रूप से तथा अप्रत्यक्ष रूप से अनुसंधान से प्रभावित होंगे।
2. **अनुसंधान के उद्देश्य**–उद्देश्यों के आधार पर समस्या विशुद्ध, व्यावहारिक एवं क्रिया अनुसंधान के रूप में देखा जा सकता है स्पष्ट उद्देश्यों के फलस्वरूप अनुसंधानकर्ता को प्राथमिकता तय करने एवं समस्या के समाधान खोजने में सहायता मिलती है। स्पष्ट उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये प्रश्नावली, गहन, साक्षात्कार, गोष्ठी, व्यवहार सम्बन्धी ढंग तथा सूचना प्रदान करने वाले व्यक्तियों का प्रयोग किया जाता है।
3. **विकल्पीय साधन**–किसी भी समस्या के समाधान के लिये अनेक साधनों का प्रयोग किया जाता है। अनुसंधानकर्ता सभी साधनों का अध्ययन कर समस्या के समाधान के लिये सबसे उपयुक्त साधन का उपयोग करता है।

विकल्पीय साधन की कुशलता–कुशलता के परिमापन हेतु सामान्यतः निम्नलिखित कसौटियाँ प्रयोग में लाई जाती हैं–

1. समस्या को स्थिर रखते हुए पूर्ण किये गये कार्य का प्रतिशत ज्ञात किया जाये।
2. लागत को स्थिर रखते हुये पूर्ण किये गये कार्य का प्रतिशत निकाला जाये।
3. प्रयासों को स्थिर रखते हुए पूर्ति में लगने वाले समय को निकाला जाये।
4. पूर्ण किये जाने वाले कार्य को विस्तृत विवरण दर्शाते हुए पूर्ति में लागत वाली लागत की गणना की जाये।
5. पूर्ण किये जाने वाले कार्य का विस्तृत प्रस्तुत करते हुये इसकी पूर्ति में लगने वाले प्रयासों का अनुमान लगाया जाये।

पर्यावरण (Environment)–इससे अभिप्रायः उस परिस्थिति से है जिसके अंतर्गत हम समस्या का अध्ययन करना चाहते [illegible] में होने वाले परिवर्तन अनुसंधान समस्या की प्रकृति एवं इसके स्वरूप को परिवर्तित करते हैं। उदाहरण के लिये यह [illegible] वाले कार्यकर्ताओं, उद्देश्यों, इसकी प्राप्ति के साधनों आदि में परिवर्तन ला सकते हैं।

❑

2.2 चर या परिवर्त्य (Variables)

प्रश्न 1. चर से आपका क्या अभिप्राय है? चरों के विभिन्न प्रकारों या वर्गीकरणों का उल्लेख कीजिए।
(What do you mean by variables? Explain about the different types or classification of [illegible]ables.)

उत्तर–**अर्थ (Meaning)**–**कर्ललिंगर (F.N. Kerlinger, 1964)** के अनुसार चर वह गुण होता है जिसके विभिन्न मूल्य हो [illegible] (Variables is a property that takes on different values)।

मनोविज्ञान की भाषा में व्यवहार तथा व्यवहार के उद्दीप्त (Stimuluate) करने वाले सभी कारकों (Factors) को 'चर' ([illegible]iable) का नाम दिया जाता है। अतः व्यक्ति, वस्तु या उद्दीपन (Stimulus) का मापने योग्य कोई भी गुण (Attribute) [illegible] कहलायेगा। इस आधार पर व्यवहार में उद्दीप को हम उद्दीपक चर (Stimulus Variable) का नाम दे देते हैं तथा व्यक्ति को [illegible] चर (Organismic Variable)।

पोस्टमैन तथा ईगन (Postman and Egan, 1966) के अनुसार **"चर वह लक्षण या गुण है जिसके अनेक प्रकार के मूल्य [illegible] हैं।"** (A variable is a characteristic or attribute that can take on a number of values.—**Postman & [illegible], 1996**)।

एडवर्ड (Edward 1971) के अनुसार, **"चर से हमारा अभिप्राय किसी भी चीज से है जिसका हम निरीक्षण कर सकते हैं और [illegible] प्रकार की हो कि इसकी इकाई के निरीक्षण के विभिन्न वर्गों में कहीं भी वर्गीकृत किया जा सके।"** (By a variable, we

mean anything that we can observe and of such a nature that each single observation can be classified into one of a number of usually exclusive class.—**A.l. Edward, 1971)**।

इस प्रकार **गैरेट (Garrett 1967)** के अनुसार **"चर वह लक्षण गुण है जिसकी मात्रा में परिवर्तन होता है और यह परिवर्तन किसी माप या आयाम पर होता है।"** (Variables are attributes or qualities which exhibit differences in magnitiude and which very along some dimenstion.—**H.E. Garette, 1967)**

डी अमेटो (D' Amato 1970) के अनुसार **'चर किसी वस्तु, घटना या प्राणी का मापन योग्य गुण या लक्षण है।'** (Variable is any measurable attribute of objects, things or beings.—**M.R. D'Amato, 1970)**

डी अमेटो (D' Amato) के अनुसार **"जिन लक्षणों का मापन नहीं किया जा सकता उन्हें चर नहीं कह सकते। इन लक्षणों का मापन मात्राप्मक (Quantitative) होना आवश्यक नहीं है क्योंकि लिंग, धर्म, प्रजाति आदि ऐसे ही चर हैं। इनका मात्रात्मक मापन संभव नहीं आयु, थकान, रोशनी, बुद्धिलब्धि शो आदि किसी न किसी प्रकार के चर हैं।"**

मैकगुयगन (MCGuigan) ने चरों के तीन सामान्य वर्ग किये हैं—

(i) उद्दीपक चर (Stimulus Variable)
(ii) सर्वांगिक चर (Organismic Variable)
(iii) अनुक्रिया चर (Response Variable)

अन्डरवुड (Underwood) के चरों के चार वर्ग किये हैं—

(i) पर्यावारिक चर (Environmental Variable)
(ii) कार्य चर (Task Variable)
(iii) अनुदेशात्मक चर (Istructional Variable)
(iv) प्रयोज्य चर (Subject Variable)

वुडबर्थ तथा स्लासबर्ग (Woodworth and Scholosberg) ने चरों के चार वर्ग किये हैं—

(i) उद्दीपक चर (Stimulus Variable)
(ii) सर्वांगिक चर (Organismic Variable)
(iii) पूर्ववर्ती चर (Antecedent Variable)
(iv) अनुक्रिया चर (Response Variable)

डी. अमाटो (D'Amato) ने चरों के तीन भागों में विभाजित किया है—

(i) स्वतंत्र चर (Independent Variable)
(ii) परतंत्र चर (Dependent Variable)
(iii) संगत चर (Relevant Variable)

डी. अमाटो की दृष्टि में संगत चर वे होते हैं जो परतंत्र चर को प्रभावित करते हैं। इसके विपरीत असंगत चर वे चर होते हैं जो परतंत्र चर को प्रभावित नहीं करते। मनोविज्ञान में स्वतंत्र चरों को संगत (Relevant) तथा असंगत (Irrelevant) चरों के रूप में वर्गीकृत करना अधिक उपयोगी होता है।

चरों के प्रकार (Types of Variables)

किसी भी प्रयोग में जिन चरों का प्रयोग किया जाता है, वे निम्नलिखित प्रकार के होते ह—

1. स्वतंत्र चर (Independent Variable)
2. आश्रित चर (Dependent Variable)
3. मध्यवर्ती चर (Intervening Variable)
4. जैविक चर (Organismic Variable)

1. स्वतंत्र चर (Independent Variable)—कोई भी परिस्थिति जिस क्रमबद्ध तरीके से शामिल किया जाता है तथा यह माना जाता है कि वह परिस्थिति निरीक्षण प्रक्रिया या आश्रित चर के लिए उत्तरदायी है, स्वतंत्र चर कहलाती है। (Any condition that is systematically introduced because it is thought to be responsible for the observed phenomenon is referred to as the independent variable.—**Cooper & McGaugh)**

व्यवहार उद्दीपक और प्राणीगत चरों (Stimulus and Organismic Variables) पर आश्रित है। इसलिये व्यवहार को आश्रित चर कहते हैं तथा प्राणीगत और उद्दीपक चरों को स्वतंत्र चर (Independent Variables) कहते हैं। वे चर जो स्वतंत्र होते तथा प्रयोगकर्ता के हाथ में अर्थात् उन्हें घटाकर, बढ़ाकर या उनमें परिवर्तन कर प्रयोग किया जा सकता है, 'स्वतंत्र चर' कहलाते हैं। स्वतंत्र चर 'प्रभाव' (Effect) के बराबर हैं।

टाउनसैंड (Townsend, 1953) के अनुसार, **"स्वतंत्र चर वह कारक है जिसे प्रयोगकर्ता निरीक्षण की गई घटनाओं या तथ्यों से सम्बन्ध ज्ञात करने के लिये घटाया-बढ़ाया जाता है।"** (An Independent variable is that factor manipulated by the experimenter in his attempt to ascertain its relationship to an observed phenomenon.—J.C. Townsent, 1953)।

एडवर्डस (Edwards, 1968) के अनुसार, **"वह चर जिस पर प्रयोगकर्ता का नियंत्रण होता है स्वतंत्र चर कहलाता है।"** (The variable over which the investigator has control are called independent variable.—A.L. Edwards, 1968)।

इन परिभाषाओं का अध्ययन करने के पश्चात् इस निष्कर्ष पर पहुंचा जा सकता है कि स्वतंत्र चर वह चर होता है जिस पर प्रयोगकर्ता का पूरा नियंत्रण रहता है। इसे प्रयोगकर्ता प्रत्यक्ष के रूप से या चयन दौरान घटाया-बढ़ाया जाता है।

किसी भी प्रयोग में प्रयोगकर्ता स्वतंत्र चर के प्रभाव का अध्ययन करता है। प्रत्येक चर प्रकृति, तीव्रता (Intensity) तथा अवधि (Duration) के आधार पर परिवर्तित किये जा सकते हैं। प्रयोगकर्ता को स्वतंत्र चर की प्रकृति, तीव्रता और अवधि का ज्ञान होता है लेकिन व्यवहार पर इनका जो प्रभाव पड़ता है उससे प्रयोगकर्ता अनभिज्ञ होता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि हर घटना या घटना के दो पक्ष हैं—कारण और प्रभाव (Cause and Effect) **'कारण'** को स्वतंत्र चर कहते हैं तथा प्रभाव (Effect) को **आश्रित चर** कहते हैं।

2. आश्रित या परतंत्र चर (Dependent Variable)—जिस प्रक्रिया का निरीक्षण करना हो उसे आश्रित या परतंत्र चर कहते हैं। (The phenomenon to be Oserved is called the dependent variable) अर्थात् प्रयोगकर्ता क्या देख रहा है—अन्य 'चर' पर आश्रित है। जो चर किसी अन्य चर का परिणाम हो या किसी अन्य चर के कारण उत्पन्न होता है उसे आश्रित चर के वर्ग में रखा जाता है। आश्रित चर 'प्रभाव' (Effect) के समकक्ष है। साधारण शब्दों में आश्रित चर वह कारक है जिसका मापन किया जाता हो। किसी प्रयोग में प्रयोगकर्ता जिस व्यवहार सम्बन्धी चर का मापन करे, वही आश्रित चर है। उदाहरणार्थ—बुद्धि पर दवाओं का प्रभाव देखना। इसमें बुद्धि दवाओं पर आश्रित है, अतः वह आश्रित चर है।

टाउनसैन्ट (Townsend, 1953)—के अनुसार, **"आश्रित चर वह है जो प्रयोगकर्ता द्वारा स्वतंत्र चर के प्रदर्शित करने पर प्रदर्शित होता है, इसी पर स्वतंत्र चर के हटाने पर अदृश्य हो जाता है। तथा स्वतंत्र चर की मात्रा में परिवर्तन से परिवर्तित हो जाता है।"** (A dependent variable is that factor which appears, disappears or varies the experimenter introduces, removes varies the independent variable.—J.C. Townsend, 1953)।

इसे आश्रित चर इसलिये कहा जाता है यह चर प्रयोगात्मक स्थिति पर आश्रित होता है।

डी अमेटो (D'Amato, 1970)—के अनुसार, **"मनोवैज्ञानिक अनुसंधान में कोई भी व्यवहार सम्बन्धी कारक जिसका मापन किया गया है, आश्रित चर कहलाता है।"** (Any measured behavioural variable of interest in a psychological investigation is called a dependent variable.—M.R.D'Amato, 1970)।

किसी भी मनोविज्ञान के प्रयोग में प्रयोगकर्ता जिस व्यवहार सम्बन्धी चर का मापन करता है वही आश्रित चर होता है। मनोविज्ञान में अधिकतर प्रयोग इन्हीं चरों के मापने के लिये किया जाता है। प्रयोगकर्त्ता को इन चरों के गुण, तीव्रता और प्रकृति का ज्ञान नहीं होता। मनोविज्ञान के अधिकतर प्रयोगों में प्रयोज्य (Subject) का प्रत्युत्तर आश्रित चर होता है। अतः आश्रित चर और प्रतिक्रिया चर (Response Variable) में अंतर नहीं माना जाता। आश्रित चर के कुछ उदाहरण हैं—हाथ, उठाना, श्वास गति, हृदय की धड़कन, शरीर के किसी अंग को हटाना। इन चरों का मापन कई उपकरणों (Devices) या वस्तुनिष्ठ परीक्षणें के द्वारा किया जाता है। इन चरों का मापन मात्रात्मक विधियों द्वारा ही किया जाता है। यदि इन चरों का मापन मात्रात्मक विधियों द्वारा संभव न हो, तभी उस स्थिति में गुणात्मक (Qualitative) मापन विधियों का प्रयोग करना पड़ता है।

3. मध्यवर्ती या असम्बद्ध चर (Intervening or Irrelevant Variable)—कुछ परिस्थितियां ऐसी होती हैं जिन्हें प्रयोगात्मक स्थिति में क्रमबद्ध तरीके से शामिल किया जाता है और वे उस प्रक्रिया में किसी भी प्रकार से उत्तरदायी नहीं होती, वे मध्यवर्ती या असम्बद्ध चर (Intervening or Irrelevant Variables) कहलाते हैं। किसी भी प्रयोग में अपनी-अपनी भूमिका निभाने वाले तत्त्वों, परिस्थितियों, कारकों आदि को मध्यवर्ती चर कहते हैं। प्रयोग में इन चरों का बहुत महत्त्व होता है। प्रयोग के दौरान इन चरों को नियंत्रित रखा जाता है। ये वे चर होता है जो स्वतंत्र चर—परतंत्र चर दोनों को ही प्रभावित करते हैं। इन चरों को जब तक नियंत्रित करके प्रयोग नहीं किया जायेगा तब तक प्रयोग से शुद्ध परिणाम प्राप्त करना असंभव है। प्रयोगकता के लिये यह आवश्यक होता है कि प्रयोग करने के लिये मध्यवर्ती चरों को पहचानें तथा उन्हें नियंत्रित करने का तरीका सोचे।

अतः कोई व्यवहार किस कारण से हुआ, यह ज्ञात करने के लिये कुछ चरों को नियंत्रित किया जाता है तथा कुछ चरों को स्वतंत्र छोड़कर उनका प्रभाव आश्रित चर पर देखा जाता है। स्वतंत्र चर को परिवर्तित करने, घटाने या बढ़ाने को हस्तचालन (Manipulation) कहते हैं। स्वतंत्र चर का हस्तचालन करके उसका प्रभाव आश्रित चर पर देखा जाता है।

4. जैविक चर (Organismic Variables)—मैकगुइगन (McGuigan, 1990) के अनुसार, **"जैविक चर से तात्पर्य जीव से सम्बन्धित भौतिक और दैहिक विशेषताओं से है, जैसे लिंग, आंखों का रंग, भार, ऊचाई, शारीरिक गठन आदि।"** इस प्रकार से जैविक चर से तात्पर्य जीव से जुड़ी मनोवैज्ञानिक विशेषताओं से भी है, 'जैसे बुद्धि, शैक्षिक स्तर, ईर्ष्या, चिन्ता, स्नायुविकृति इत्यादि। (By organismic variables were on any relatively stable characteristics of the organism, including such physical or pschological characteristics as sex, eye, colour, height, and body build as well as such psyhchological characteristics as intelligence, educational level, anxiety neuroticism and prejudice.—F.J. McGuigan, 1990)

जैविक चरों में ही व्यवसाय, सामाजिक क्रिया एवं मादक औषधियों को भी शामिल किया जाता है।

5. मात्रात्मक एवं गुणात्मक चर (Quantitative and Qualitative Variables)—सभी चरों को हम एक और प्रकार से भी वर्गीकृत कर सकते हैं—मात्रात्मक चर और गुणात्मक चर।

1. **मात्रात्मक चर (Quanitative Variable)**—डी. अमेटो के अनुसार, **"कोई भी चर जिसे मात्रा की दृष्टि से क्रमित या मापा जा सके, वह मात्रात्मक चर कहलाता है।"** (Any variable that can be ordered with respect to magnitude is a quantative variable.—M.R.D.'Amato, 1970)।
   उदाहरणार्थ—इन चरों में वस्तुओं या चीजों के उन गुणों या लक्षणों को शामिल किया जाता है जिसकी मुख्य विशेषता मात्रा होती है। जैसे आयु, किसी कार्य को सीखने के प्रयासों की संख्या आदि। मात्रात्मक चर भी दो प्रकार के हो सकते हैं, निरंतर और खंडित मात्रात्मक चर (Continuous and Discrete Quantatitative Variables)
2. **गुणात्मक चर (Qualitative Variables)**—डी. अमेटो के अनुसार ही, **"गुणात्मक चर व चर होते हैं जो मात्रा की दृष्टि से क्रमिक नहीं किये जा सकते वा मापे नहीं जा सकते।"** (Qualitative variables are those variables composed of categories which cannot be ordered with respect to magnitude.—M.R.D.'Amato, 1970)।
   उदाहरणार्थ—धर्म, व्यवसाय, प्रजातियां आदि इस वर्ग में शामिल हैं। वैज्ञानिक अनुसंधानों में मात्रात्मक चरों को अधिक महत्त्व दिया जाता है तथा इनका प्रयोग ही अधिकतर किया जाता है।

'चर' के प्रकार

↓

स्वतंत्र चर | आश्रित चर | मध्यवर्ती चर | जैविक चर | मात्रात्मक/गुणात्मक चर

(चित्र : 'चर' के प्रकार)

प्रश्न 2. चरों का नियन्त्रण करने की मुख्य विधियाँ कौन-कौन सी हैं? विवेचना कीजिए।
(What are the various methods of controlling variables. Discuss)

अथवा

चरों को नियन्त्रण करने से सम्बन्धित प्रमुख विधियों पर प्रकाश डालिए।
(Throw light on the various methods of controlling variables.)

उत्तर—चरों का नियंत्रित करना अति आवश्यक होता है। जो चर समस्या को प्रभावित करते हैं उनका पता लगाने के बाद तथा उन्हें नियंत्रित करके उनके प्रभाव को दूर करना चाहिए। ऐसा करने के लिये विभिन्न विधियों का प्रयोग किया जाता है जो निम्नलिखित हैं—

1. **निष्कासन विधि (Method of Removal)**—इस विधि के अन्तर्गत आश्रित चरों को प्रभावित करने वाले चरों को हटा जाता है। उदाहरणार्थ प्रयोगकर्ता यदि यह महसूस करे कि किसी प्रश्नावली में प्रश्नों के उत्तरों को आयु और लिंग प्रभावित कर तो प्रयोगकर्ता आयु और लिंग को नियंत्रित कर लेता है अर्थात् सभी एक ही आयु के तथा एक ही लिंग के प्रयोज्यों (Subject) लेता है। इसी प्रकार यदि किसी प्रयोग में ध्वनि और अंधेरा प्रभावित करते हों तो उसके कमरे को ध्वनि रहित और अंधेरा-रहित जाता है।

2. **आवरण विधि (Method of Screening or Balancing)**—इस विधि के अन्तर्गत सम्बन्धित चर के प्रभाव को समाप्त के लिये सम्बन्धित चर से भी अधिक तीव्र चर का प्रयोग करके सम्बन्धित चर के प्रभाव को दूर किया जाता है। उदाहरणार्थ, प्रयोग में घंटी के बजने से परिणाम प्रभावित होते हैं तथा इस घंटी की आवाज को नियंत्रित नहीं किया जा सकता। ऐसी परिस्थिति कर्ता घंटी के बराबर की आवाज या उससे तेज आवाज वाली घंटी का प्रयोग किया जाता है। इस आवाज का प्रयोग की तक किया जाता है। घंटी की आवाज का प्रभाव समस्त प्रयोज्यों (Subject) पर पड़ेगा तथा यह प्रभाव ज्ञात होगा। प्रयोग णामों से इस प्रभाव को ज्ञात किया जा सकता है।

3. **समतुल्यन विधि (Counter Balancing Method)**—कई प्रयोगों में भाग लेने वाले प्रतिभागी (Participants) दो या भिन्न-भिन्न परिस्थितियों का सामना करते हैं। यह निर्धारित करना कि 'ठहरों' के चिन्ह् को लाल रंग से लिखा जाये या पीले हमें प्रतिक्रिया अवधि (Reaction Time) का मापन करना पड़ेगा। मान लो, पहले हम लाल चिन्ह प्रस्तुत करते हैं, फिर पीला प्रस्तुत करते हैं, हम पाते हैं कि पीले चिन्ह् के लिये प्रतिक्रिया अवधि कम होगी। तो क्या हमें ट्रैफिक ब्यूरो को पीले रंग से लिखने की सिफारिश करनी चाहिए? चूंकि पहले लाल रंग को प्रस्तुत किया गया था जिससे व्यक्ति को प्रशिक्षण प्राप्त हो गया योगिक परिस्थिति में उसने स्वयं को ढाल लिया था। प्रायोगिक यंत्र पर कार्य करना सीखने से तथा प्रायोगिक परिस्थिति में ढलने उसे पीला संकेत प्रस्तुत किया गया। इसलिये उनकी पीले संकेत के प्रति प्रतिक्रिया अवधि पर पड़ता है। अभ्यास की मात्रा को नियंत्रित करने के लिये समतुल्यन विधि (Counter Balancing Method) का प्रयोग किया जाता है। इसके प्रतिभागी पहले पीले संकेत के लिये प्रतिक्रिया करेंगे और फिर लाल संकेत के लिये प्रतिक्रिया करेंगे। शेष आधे प्रतिभागी पहले चिन्ह् के लिये प्रतिक्रिया करेंगे तथा फिर पीले रंग के लिये प्रतिक्रिया करेंगे। (Half the participants react to the yellow first and the red sign second, whereas the other half would experience the red sign first and the sign second.)

समतुल्यन विधि का सामान्य सिद्धांत है कि हर परिस्थिति (जैसे चिन्ह् का रंग) प्रत्येक प्रतिभागी के सन्मुख बराबर अवधि के प्रस्तुत की जानी चाहिए तथा हरे अभ्यास-सत्र में हर परिस्थिति बराबर अवधियों के लिये घटित हो। (Each condition i.e. sign, must be presented to each participant an equal number of times, and each condition must an equal number of times at each practice session.)

प्रायोगिक परिस्थितियों की किसी संख्या का समतुल्यन किया जा सकता है। उदाहरणार्थ, यदि हमारे पास तीन रंग हैं—लाल, और हरा, तो प्रतिभागी हर रंग के लिये प्रतिक्रिया करेंगे। हर रंग-चिन्ह् को हर सत्र में दो बार प्रस्तुत करना पड़ेगा।

उदाहरण-जब दो रंग वाले चिन्ह् हों—

क्रम नं.	प्रायोगिक सत्र	
	1	2
½ प्रतिभागी	पीला चिन्ह्	लाल चिन्ह्
½ प्रतिभागी	लाल चिन्ह्	पीला चिन्ह्

उदाहरण— तीन स्वतंत्र चरों का समतुल्यन

(A Conter Balanced Design of three Independent Variables)

क्रम नं.		प्रायोगिक सत्र		
		1	2	3
1.	1/6 of Participants	R	Y	G
2.	1/6 of Participants	R	G	Y
3.	1/6 of Participants	Y	R	G
4.	1/6 of Participants	Y	G	R
5.	1/6 of Participants	G	R	Y
6.	1/6 of Participants	G	Y	R

समतुल्यन (Counter balancing) उस समस्या का समाधान करने के लिये है जब एक से अधिक प्रायोगिक स (Experimental Session) से कोई समस्या पैदा होती है। अर्थात् जब अभ्या से परिणामस्वरूप प्रतिभागी की निष्पादन (Performance) सुधरती हो। लेकिन थकान के कारण निष्पादनता में कमी भी आ सकती है। अतः समतुल्यन विधि द्वारा अभ्या और थकान (Practice and Fatigue) के प्रभावों का एक समान वितरण सभी परिस्थितियों में किया जाता है। जो भी प्रभाव हो हैं उन्हें क्रम प्रभाव (Order Effects) कहते हैं तथा वे हर परिस्थिति में व्यवहार को समान रूप से प्रभावित करते हैं क्योंकि वे अभ्या के हर सत्र में समान रूप से उत्पन्न होते हैं।

समतुल्यन विधि को प्रयोग करते हुए यह अवधारणा होती है कि एक चर (Variable) के दूसरे चर के सम्मुख प्रस्तुत क से जो प्रभाव पैदा होता है वह दूसरे चर को पहले चर के सम्मुख प्रस्तुत करने से उत्पन्न प्रभाव के समान होता है।

उदाहरणार्थ, लाल संकेत के लिये पहले प्रतिक्रिया के अभ्यास का प्रभाव पीले संकेत लिये पहले प्रतिक्रिया के अभ्यास के प्रभ के समान होगा।

कई बार आवरण विधि (Balancing Method) और समतुल्यन विधि (Counter Balancing Method) में अस्पष्ट (Confusion) पैदा हो जाती है। क्योंकि दोनों में 'तुल्यन (Balancing) शब्द का प्रयोग होता है। समतुल्यन (Counter balanc विधि का प्रयोग तब होता है जब प्रत्येक प्रतिभागी एक से अधिक 'ट्रीटमैंट' (Treatment) प्राप्त करे तथा प्रभावों को स परिस्थितियों में बराबर-बराबर बांटने का प्रयास किया जाता हो। ये प्रभाव हैं—थकान, अभ्यास आदि का। आवरण का तुल्य (Balancing) विधि में प्रत्येक प्रतिभागी केवल एक ही प्रायोगिक ट्रीटमैंट (On Experimental Treatment) प्राप्त करता है इस प्रकार एक प्रतिभागी एक ही प्रायोगिक या नियंत्रित परिस्थिति में कार्य करता है।

संक्षेप में, कई बार प्रयोग में सतत् त्रुटियां (Constant Errors) आ जाती हैं। जैसे मनोविज्ञान से जुड़े प्रयोगों में थक अभ्यास आदि कारक प्रयोग के परिणामों को प्रभावित करते हैं। इन कारकों अर्थात् अभ्यास और थकान के कारण जो त्रुटियां हो उन्हें सतत् त्रुटि कहते हैं। ऐसी त्रुटि को दूर करने के लिए ही समतुल्यन विधि का प्रयोग किया जाता है।

4. संयोगीकरण (Randomization Method)—संयोगीकरण (Randomization) वह प्रक्रिया है जिसमें यह सुनिश्चि किया जाता है कि जनसंख्या (Population) के हर सदस्य को चयन की एक समान संभावना हो। अर्थात् जब प्रत्येक स्थिति सभी प्रयोज्यों (Subjects) का परीक्षण करना हो तब इस विधि का प्रयोग किया जाता है। (Randomization is a proced that assures that each member of a population or universe has an equal probability of bei selected.—**F.J. McGuigan, 1990**)

यदि हम बिना किसी (unbiased) के 500 छात्रों की जनसंख्या में से प्रतिभागियों का चयन करें तो प्रत्येक छात्र के प्रयोग के चयन के बराबर अवसर होंगे।

संयोगीकरण विधि नियंत्रण की एक प्रविधि है। संयोगीकरण के दो सामान्य उपयोग हैं—

1. जब यह पता चल जाये कि कुछ विशेष प्रकार के बाहरी चर (Extraneous Variables) प्रायोगिक स्थिति में स हो जाते हैं। और उपरोक्त बताये गये अन्य नियंत्रण करने के तरीकों से वे नियंत्रित नहीं हो सकते।
2. जब हम यह धारणा बना लेते हैं कि कुछ बाहरी चर सक्रिय होंगे लेकिन उनका हम विशिष्टिकरण नहीं कर सकते परिणामस्वरूप हम नियंत्रण की अन्य विधियों का उपयोग भी नहीं कर सकते।

जब पांच या अधिक परिस्थितियों का प्रयोगकर्ता का समतुल्यन (Counter Balancing) करना होता है तब इतनी परिस्थितियों का समतुल्यन कठिन हो जाता है। ऐसी परिस्थिति में प्रयोगकर्ता को संयोगीकृत-विधि का प्रयोग करना पड़ता है। अतः संयोगीकरण की विधि द्वारा प्रयोगकर्ता बाहरी चरों (Extraneous Variables) के प्रभावों का बराबर करता है।

5. **परिस्थितियों की स्थिरता की विधि (Method of Constancy of Conditions)**—जब कभी कोई प्रयोगकर्ता सम्बन्धित प्रभाव को पहली विधि द्वारा दूर नहीं कर सकता तब इन चरों को स्थिर रखकर नियंत्रित करने की विधि स्थिरता विधि कहलाती है। उदाहरणार्थ, आयु का कारक सभी आश्रित चरों को प्रभावित करता है। आयु चर को नियंत्रित करने के लिये सभी प्रयोज्यों को समान आयु का लेना चाहिए। इससे आयु का प्रभाव समाप्त हो जायेगा। इसी प्रकार दिन के समय को स्थिर बनाने के लिये सभी प्रतिभागियों का अध्ययन हर दिन एक ही समय पर यदि किया जाता है जो वह दिन की स्थिरता (Constancy of Day) कहलायेगी। इसी प्रकार, एक ही कमरे में प्रायोगिक सत्रों का संचालन करने में सभी परिस्थितियों को स्थिर रख जा सकता है। अतः कमरे की विशेषताओं का जो भी प्रभाव हो (दीवारों का रंग, फर्नीचर, स्थिति आदि) वह सभी प्रतिभागियों पर एक सा ही होगा। इसी तरह सभी दैहिक चरों (Organismic Variables) के स्थिर रखने के लिये उन विशेषताओं वाले प्रतिभागियों का चयन करते हैं जिन विशेषताओं की उपस्थिति हम चाहते हैं, जैसे सभी प्रतिभागी पुरुष ही हो या सभी प्रतिभागी आठवें ग्रेड को पूरा कर चुके हों या सभी प्रतिभागी 30 वर्ष के ही हों।

प्रायोगिक प्रक्रिया के सभी पक्षों को स्थिर (Constant) रखा जाता है जैसे प्रतिभागियों को निर्देश देने। प्रयोगकर्ता सभी प्रतिभागियों को एक जैसे निर्देश पढ़कर सुनाता है। अधिक स्पष्ट नियंत्रण के लिये प्रयोगकर्ता टेप-रिकार्डर की सहायता से प्रमापीकृत निर्देश (Standard Instructions) प्रस्तुत करता है।

प्रक्रियावश, सभी प्रतिभागियों को एक समान पदों का अनुकरण करना चाहिए। प्रयोगकर्ता के दृष्टिकोण को भी सभी प्रतिभागियों के लिए स्थिर रहना चाहिए। इसी प्रकार परिणाम रिकार्ड करने के लिये सभी उपकरण सभी प्रतिभागियों के लिये एक जैसे होने चाहिएं। ❐

प्रश्न 3. उपकल्पना के चरों की भूमिका के आधार पर वर्गों का उल्लेख करें।

(Analyse the different categories of Variables of Hypothesis on the basis of their role.)

अथवा

शोधक चरों के चयन हेतु आधार क्या हैं?

(What are the basis of Research Variables.)

उत्तर–उपकल्पना के चर (Variables of Hypothesis)—उपकल्पना के कथन में कई चर (Variables) शामिल किये जाते हैं। चरों को व्यावहारिक रूप में प्रस्तुत किया जाता है। उपकल्पना की पुष्टि हेतु दो महत्त्वपूर्ण बातें आवश्यक होती हैं–

1. चर (Variables)
2. चरों की व्यावहारिक परिभाषा (Operational Definition)

वैज्ञानिक शोध कार्यों में चरों को ही महत्त्व दिया जाता है।

चरों की प्रकृति परिमाणात्मक होती है। गुणात्मक विशेषताओं को कम महत्त्व दिया जाता है। उपकल्पना चरों की भूमिकाओं को निर्धारित करती हैं। शोध के अनुसार चरों की भूमिकाएं बदलती रहती हैं। साधारणतः चरों को भूमिकाओं के आधार पर पाँच वर्गों में विभाजित किया जाता है–

1. स्वतन्त्र चर (Independent Variable)
2. आश्रित चर (Dependent Variable)
3. परिमित चर (Moderator Variable)
4. नियन्त्रित चर (Control Variable)
5. मध्यस्थ चर (Intervening Variable)

1. स्वतन्त्र चर (Independant Variable)—यह वह चर होता है जो किसी वातावरण में क्रियाशील होता है और व्यवहारवाद को प्रभावित करता है। यह वह कारक होता है जिसका मापन किया जाता है और प्रयोग द्वारा उसके प्रभाव का अध्ययन किया जाता है। आश्रित चर या मानदण्ड चर से सह-सम्बन्ध स्थापित किया जाता है। आश्रित चर के परिवर्तन के लिए स्वतन्त्र चर ही कारण होता है। स्वतन्त्र चर सदैव अन्य चर को प्रभावित करता है। इसका उदाहरण निम्नलिखित है। इस चर को प्रयोगात्मक अथवा प्रयोगात्मक चर कहते हैं।

उपकल्पना–'शिक्षक की कक्षा अन्तःक्रिया छात्रों की निष्पत्तियों से सम्बन्धित होती है।'

इस उपकल्पना में अन्तःक्रिया (Interaction) तथा निष्पत्ति के चर सम्मिलित किये गये हैं। कक्षा अन्तःक्रिया स्वतन्त्र चर की भूमिका का निर्वाह करती है और निष्पत्ति आश्रित चर है। कक्षा अन्तः क्रिया छात्रों की निष्पत्तियों को प्रभावित करती है और छात्रों की निष्पत्तियों से सम्बन्धित हैं।

2. आश्रित चर (Dependant Variable)–किसी स्वतन्त्र चर का प्रभाव जिस चर के आधार पर ज्ञात किया जाता है उसे आश्रित चर कहते हैं। आश्रित चर का मूल्य स्वतन्त्र चर के मूल्य पर आधारित होता है। किसी परिस्थिति के परिवर्तन के परिणाम को प्रदर्शित करता है।

3. परिमित चर (Moderator Variable)–परिमित चर एक विशिष्ट प्रकार का स्वतन्त्र चर होता है। इसे गौण स्वतन्त्र चर की संज्ञा भी दी जाती है। इस चर के चयन करने से प्राथमिक स्वतन्त्र चर तथा आश्रित चर में सह-सम्बन्ध ज्ञात करने में सहायता मिलती है।

परिमित चर (Moderator Variable) की परिभाषा एक घटक के रूप में दी जाती है। शोध-कर्ता इसका निरीक्षण इसलिए करता है जिससे शोध की परिस्थिति परिमित हो जाती है तथा सामान्यीकरण का क्षेत्र अधिक व्यापक हो जाता है। जैसे–लिंग तथा सामाजिक-आर्थिक स्तर, शहरी तथा ग्रामीण चर परिमित चर का कार्य करते हैं।

4. नियन्त्रित चर (Controlled Variable)–प्रयोगात्मक शोध कार्यों में प्रयोगात्मक चर (Experimental Variable) की प्रभावशीलता का अध्ययन नियन्त्रित चर के सन्दर्भ में किया जाता है। प्रभावशीलता सापेक्षिक होती है। अतः प्रभावशीलता के लिए जिस सन्दर्भ को प्रयुक्त किया जाता है उसे नियन्त्रित चर कहते हैं।

5. मध्यस्थ चर (Intervening Variable)–मध्यस्थ चर का स्वरूप अमूर्त होता है इसीलिए इसको सूझ से ही पहचाना जा सकता है। शैक्षिक-शोध में मध्यस्थ चर अधिक महत्त्वपूर्ण होते हैं क्योंकि न्यादर्श की इकाई मानव अथवा छात्र होते हैं। उनकी अभिवृत्ति, अधिगम की प्रक्रिया का ढंग भिन्न होता है। आश्रित चर तथा मानदण्ड चर पर प्रभाव में मध्यस्थता करते हैं।

शोध की प्रक्रिया में विभिन्न प्रकार के चरों को प्रयुक्त किया जाता है। विशिष्ट चरों को विशिष्ट भूमिकाओं का निर्वाह करना होता है। चरों की भूमिका का निर्धारण शोध की प्रकृति के अनुरूप किया जाता है। किसी विशिष्ट चर की भूमिका निश्चित नहीं होती है। शोध के अनुसार भूमिका बदलती रहती है।

शोध के चरों के चयन हेतु आधार (Basis for Research Variables)

शोधकर्ता को सर्वप्रथम स्वतन्त्र तथा आश्रित चर का निर्धारण करना होता है तभी वह उपकल्पना का प्रतिपादन कर सकता है। स्वतन्त्र तथा आश्रित चर का निर्धारण करने के बाद परिमित चरों का निर्धारण करता है तथा कुछ चरों को अचर (Constant) मान लेता है। अपनी सूझ के आधार पर मध्यस्थ चरों पर भी विचार करना चाहिए। परन्तु साधारणतः इस प्रकार के चरों पर ध्यान नहीं देते हैं। शोध के अन्तर्गत अनेकों चर निहित होते हैं, सभी को सम्मिलित करना सम्भव नहीं होता है। इसलिए कुछ चरों को बिल्कुल निकाल दिया जाता है तथा कुछ को अचर (Constant) मान लिया जाता है। सीमित चरों को ही शोध में सम्मिलित किया जाता है तभी शोध करना सम्भव हो पाता है। साधारण चरों के चयन के प्रमुख तीन आधार प्रयुक्त किये जाते हैं–

1. सैद्धान्तिक (Theoretical)
2. शोध प्रारूप (Research Design)
3. व्यावहारिकता (Practical)

1. सैद्धान्तिक (Theoretical)–शोधकर्ता चरों की भूमिका निर्धारण अपनी इच्छा से नहीं कर सकता है। उसे अपने चरों की भूमिका हेतु सैद्धान्तिक आधार प्रस्तुत करना होता है। परिमित चर के निर्धारण में यह विचार करना होता है कि वह किस प्रकार स्वतन्त्र तथा आश्रित चर के सह-सम्बन्ध के लिए उत्तरदायी है या प्रभावित करता है। इसको सम्मिलित करने से शोध सामान्यीकरण का क्षेत्र बढ़ सकता है। मध्यस्थ चर के निर्धारण में भी सैद्धान्तिक आधार ढूंढ़ना होता है।

2. शोध प्रारूप (Research Design)–प्रयोगात्मक शोध में प्रारूप का विशेष महत्त्व होता है कि नियन्त्रित तथा प्रयोगात्मक चर का सम्पादन सही रूप में सम्भव हो सकेगा। शोधकर्ता नियन्त्रण करने में समर्थ हो सकेगा तभी प्रयोगात्मक शोध के निष्कर्षों को वैध रूप में प्राप्त किया जा सकता है।

3. व्यावहारिकता (Practical)—एक शोधकर्ता अपने शोध के सीमित चरों का ही अध्ययन कर सकता है। शोध को व्यावहारिक बनाने के लिए चरों का चयन करना होता है। शोध के चरों का मापन करना सम्भव होगा। यदि परीक्षण उपलब्ध नहीं है तब शोधकर्ता उनकी रचना करने में समर्थ होगा। उनका विश्लेषण करना भी सुगम होगा। चरों की परिभाषा व्यावहारिक रूप में करना आवश्यक होता है।

चरों के चयन के अन्तिम निर्णय के लिये परिस्थितियाँ (Final Decision for selection of variables)—शोधकर्ता एच. एच. मैकासन ने शोध के चरों को चयन के अन्तिम निर्णय के लिये निम्नलिखित परिस्थितियों का सुझाव दिया है—

1. चरों की परिभाषा का यह निर्णय लिया जाता है कि समान परिस्थिति के विभिन्न न्यायदर्श लेने पर एक ही निष्कर्ष प्राप्त हो सकेंगे।
2. चरों की परिभाषा में जिन शब्दों को प्रयुक्त किया जाये उनके अर्थ की विश्वसनीयता होनी चाहिए।
3. व्यावहारिक रूप में जिन शब्दों की परिभाषा की गई है उन शब्दों के पर्यायवाची नहीं होने चाहिएं।
4. जिन परिभाषाओं का चयन किया गया है उनकी शोध की दृष्टि सार्थकता होनी चाहिए और अध्ययन की दृष्टि से समुचित होना चाहिए।
5. परिभाषा का स्वरूप ऐसा होना चाहिए जो शोध की सभी परिस्थितियों में प्रयुक्त हो सके।

शब्दों की व्यावहारिक परिभाषा निरीक्षण की हुई विशेषताओं पर आधारित हो जो शब्द प्रयुक्त किये गये उनका प्रत्यक्षीकरण सम्भव तथा महत्त्वपूर्ण होना चाहिए। शब्दों की परिभाषा तीन प्रकार से की जाती है—

प्रथम प्रकार की व्यावहारिक परिभाषा में निहित क्रियाओं को सम्मिलित किया जाता है जिससे उस शब्द का रूप प्रदर्शित होता है।

द्वितीय प्रकार की व्यावहारिक परिभाषा में उस स्वरूप को सम्मिलित किया जाता है जिससे विशिष्ट उद्देश्य या वस्तु की परिभाषा की जाती है। इसमें उसके गतिशील पक्ष को महत्त्व दिया जाता है।

तृतीय प्रकार की व्यावहारिक परिभाषा में उस शब्द या उद्देश्य या तथ्य के उस स्वरूप को महत्त्व दिया जाता है जैसे वह देखने में प्रतीत होता है। उसके स्थिर पक्ष की विशेषताओं को सम्मिलित किया जाता है। यह परिभाषा उसके मापन में सहायक होती है। किसी उपकल्पना की पुष्टि की क्षमता समुचित व्यावहारिक परिभाषा पर आधारित होती है। ❐

लघूत्तरात्मक प्रश्न
(Short Answer Type Questions)

प्रश्न 1. चर किसे कहते हैं? संक्षेप में बताएं।

अथवा

चर के अर्थ को संक्षेप में स्पष्ट करें।

उत्तर–**अर्थ (Meaning)—कर्ललिंगर (F.N. Kerlinger, 1964)** के अनुसार चर वह गुण होता है **"जिसके विभिन्न मूल्य हो सकते हैं"** (Variables is a property that takes on different values.—**F.M. Kerlinger, 1964**)

मनोविज्ञान की भाषा में व्यवहार तथा व्यवहार के उद्दीप्त (Stimuluate) करने वाले सभी कारकों (Factors) को 'चर' (Variable) का नाम दिया जाता है। अतः व्यक्ति, वस्तु या उद्दीपन (Stimulus) का मापने योग्य कोई भी गुण (Attribute) चर कहलायेगा। इस आधार पर व्यवहार में उद्दीप को हम उद्दीपक चर (Stimulus Variable) का नाम दे देते हैं तथा व्यक्ति को अंगीभूत चर (Organismic Variable)।

प्रश्न 2. चर को विभिन्न मनोवैज्ञानिकों द्वारा दी गई परिभाषाओं के आधार पर संक्षेप में स्पष्ट करें।

अथवा

चर को परिभाषित कीजिए।

उत्तर–**1. पोस्टमैन तथा ईगन (Postman and Egan, 1966)** के अनुसार, **"चर वह लक्षण या गुण है जिसके अनेक प्रकार के मूल्य होते हैं।"** (A variable is a characteristic or attribute that can take on a number of values.—**Postman and Egan, 1996**)।

प्रश्न 5. स्वतन्त्र चर किसे कहते हैं? उचित परिभाषाओं द्वारा संक्षेप में व्यक्त करें।

अथवा

स्वतन्त्र चर से आपका क्या अभिप्राय है? संक्षेप में स्पष्ट करें।

उत्तर–स्वतंत्र चर (Independent Variable)–कूपर और मैकगाह के अनुसार **"कोई भी परिस्थिति जिस क्रमबद्ध तरीके से शामिल किया जाता है तथा यह माना जाता है कि वह परिस्थिति निरीक्षण प्रक्रिया या आश्रित चर के लिए उत्तरदायी है, स्वतंत्र चर कहलाती है।"** (Any condition that is systematically introduced because it is thought to be responsible for the observed phenomenon is referred to as the independent variable.—**Cooper & McGaugh**)

व्यवहार उद्दीपक और प्राणीगत चरों (Stimulus and Organismic Variables) पर आश्रित है। इसलिये व्यवहार को आश्रित चर कहते हैं तथा प्राणीगत और उद्दीपक चरों को स्वतंत्र पर (Independent Variables) कहते हैं। वे चर जो स्वतंत्र होते हैं तथा प्रयोगकर्ता के हाथ में अर्थात् उन्हें घटाकर, बढ़ाकर या उनमें परिवर्तन करे प्रयोग किया जा सकता है, 'स्वतंत्र चर' कहलाते हैं। स्वतंत्र चर 'प्रभाव' (Effect) के बराबर हैं।

टाउनसैंड (Townsend, 1953) के अनुसार, **"स्वतंत्र चर वह कारक है जिसे प्रयोगकर्ता निरीक्षण की गई घटनाओं या तथ्यों के बीच सम्बन्ध ज्ञात करने के लिये घटाया-बढ़ाया जाता है।"** (An Independent variable is that factor manipulated by the experimenter in his attempt to ascertain its relationship to an observed phenomenon.—**J.C. Townsent, 1953**)।

एडवर्डस (Edwards, 1968) के अनुसार, **"वह चर जिस पर प्रयोगकर्ता का नियंत्रण होता है स्वतंत्र चर कहलाता है।"** (The variable over which the investigator has control are called independent variable.—**A.L. Edwards, 1968**)।

इस परिभाषाओं का अध्ययन करने के पश्चात् इस निष्कर्ष पर पहुंचा जा सकता है कि स्वतंत्र चर वह चर होता है जिस पर प्रयोगकर्ता का पूरा नियंत्रण रहता है। इसे प्रयोगकर्ता प्रत्यक्ष के रूप से या चयन दौरान घटाया-बढ़ाया जाता है।

प्रश्न 6. परतन्त्र चर आश्रित के अर्थ को उचित परिभाषाओं के आधार पर संक्षेप में स्पष्ट करें।

अथवा

आश्रित चर या परतन्त्र चर किसे कहते हैं? संक्षेप में व्यक्त करें।

उत्तर–जिस प्रक्रिया का निरीक्षण करना ही उसे आश्रित या परतंत्र चर कहते हैं। (The phenomenon to be observed is called the dependent variable) अर्थात् प्रयोगकर्ता क्या देख रहा है–वह अन्य 'चर' पर आश्रित है जो चर किसी अन्य चर का परिणाम हो या किसी अन्य चर के कारण उत्पन्न होता है उसे आश्रित चरों के वर्ग में रखा जाता है। आश्रित चर 'प्रभाव' (Effect) के समकक्ष है। साधारण शब्दों में आश्रित चर वह कारक है जिसका मापन किया जाता हो। किसी प्रयोग में प्रयोगकर्ता जिस व्यवहार सम्बन्धी चर का मापन करे, वही आश्रित चर है। उदाहरणार्थ बुद्धि पर दवाओं पर प्रभाव देखना। इसमें बुद्धि दवाओं पर आश्रित चर है।

टाउनसैन्ट **(Townsend, 1953)**–के अनुसार, **"आश्रित चर वह है जो प्रयोगकर्ता द्वारा स्वतंत्र चर के प्रदर्शित करने पर प्रकट होता है, इसी पर स्वतंत्र चर के हटाने पर अदृश्य हो जाता है। तथा स्वतंत्र चर की मात्रा में परिवर्तन से परिवर्तित हो जाता है।"** (A dependent variable is that factor which appears, disappears or varies the experimenter introduces or removes varies the independent variable.—**J.C. Townsend, 1953**)।

इसे आश्रित चर इसलिये कहा जाता है यह चर प्रयोगात्मक स्थिति पर आश्रित होता है।

डी अमेटो **(D'Amato] 1970)**–के अनुसार, **"मनोवैज्ञानिक अनुसंधान में कोई भी व्यवहार सम्बन्धी कारक जिसका मापन किया गया है, आश्रित चर कहलाता है।"** (Any measured behavioural variable of interest in a psychological investigation is called a dependent variable.—**M.R.D'Amato.1970**)

किसी भी मनोविज्ञान के प्रयोग में प्रयोगकर्ता जिस व्यवहार सम्बन्धी चर का मापन करता है वही आश्रित चर होता है। मनोविज्ञान अधिकतर प्रयोग नहीं इन्हीं चरों के मापने के लिये किया जाता है। प्रयोगकर्त्ता को इन चरों के गुण, तीव्रता और प्रकृति का ज्ञान होता। मनोविज्ञान के अधिकतर प्रयोगों में प्रयोज्य (Subject) का प्रत्युत्तर आश्रित चर होता है। अतः आश्रित चर और प्रतिक्रिया (Response Variable) में अंतर नहीं माना जाता। आश्रित चर के कुछ उदाहरण हैं–हाथ, उठाना, श्वास गति, हृदय की

धड़कन, शरीर के किसी अंग को हटाना। इन चरों का मापन कई उपकरणों (Devices) या वस्तुनिष्ठ परीक्षणों के द्वारा किया जाता है। इन चरों का मापन मात्रात्मक विधियों द्वारा ही किया जाता है। यदि इन चरों का मापन मात्रात्मक विधियों द्वारा संभव न हो, तभी उस स्थिति में गुणात्मक (Qualitative) मापन विधियों का प्रयोग करना पड़ता है।

प्रश्न 7. मध्यवर्ती चर या बाह्य चर किसे कहते हैं? संक्षेप में बताएं।

उत्तर—कुछ परिस्थितियां ऐसी होती हैं जिन्हें प्रयोगात्मक स्थिति में क्रमबद्ध तरीके से शामिल किया जाता है और वे उस प्रक्रिया में किसी भी प्रकार से उत्तरदायी नहीं होती, वे मध्यवर्ती या असम्बद्ध चर (Intervening or Irrelevant Variables) कहलाते हैं। किसी भी प्रयोग में अपनी-अपनी भूमिका निभाने वाले तत्त्वों, परिस्थितियों, कारकों आदि को मध्यवर्ती चर कहते हैं। प्रयोग में इन चरों का बहुत महत्त्व होता है। प्रयोग के दौरान इन चरों को नियंत्रित रखा जाता है। ये वे चर होता है। जो स्वतंत्र चर-परतंत्र चर दोनों दोनों को ही प्रभावित करते हैं। इन चरों को जब तक नियंत्रित करके प्रयोग नहीं किया जायेगा तब तक प्रयोग से शुद्ध परिणाम प्राप्त करना असंभव है। प्रयोगकता के लिये वह आवश्यक होता है कि प्रयोग करने के लिये मध्यवर्ती चरों को पहचाने तथा उन्हें नियंत्रित करने का तरीका सोचे।

अतः कोई व्यवहार किस कारण से हुआ, यह ज्ञात करने के लिये कुछ चरों का नियंत्रित किया जाता है तथा कुछ चरों को स्वतंत्र छोड़कर उनका प्रभाव आश्रित चर पर देखा जाता है। स्वतंत्र चर को परिवर्तित करने, घटाने या बढ़ाने को हस्तचालन (Manipulation) कहते हैं। स्वतंत्र चर का हस्तचालन करके उसका प्रभाव आश्रित चर पर देखा जाता है।

प्रश्न 8. जैविक चर क्या होते हैं? संक्षेप में स्पष्ट करें।

अथवा

जैविक चर के अर्थ को संक्षेप में व्यक्त करें।

उत्तर—मैकगुइगन (McGuigan, 1990) के अनुसार, **"जैविक चर से तात्पर्य जीव से सम्बन्धित भौतिक और दैहिक विशेषताओं से है, जैसे लिंग, आंखों का रंग, भार, ऊचाई, शारीरिक गठन आदि।"** इस प्रकार से जैविक चर से तात्पर्य जीव से जुड़ी मनोवैज्ञानिक विशेषताओं से भी है, 'जैसे बुद्धि, शैक्षिक स्तर, ईर्ष्या, चिन्ता, स्नायुविकृति इत्यादि। (By organismic variables we mean relatively stable characteristics of the organism, including such physical or pschological characteristics as sex, eye, colour, height, weight and body build as well as such psyhchological characteristics as intelligence, educational level, anxiety Neuroticism and prejudice.—**F.J. McGuigan, 1990)**

जैविक चरों में ही व्यवसाय, सामाजिक क्रिया एवं मादक औषधियों को भी शामिल किया जाता है।

प्रश्न 9. मात्रात्मक चर क्या होते हैं? संक्षेप में बताएं।

अथवा

मात्रात्मक चर के अर्थ को संक्षेप में स्पष्ट करें।

उत्तर—डी. अमेटो के अनुसार, **"कोई भी चर जिसे मात्रा की दृष्टि से क्रमित या मापा जा सके, वह मात्रात्मक चर कहलाता है।"** (Any variable that can be ordered with respect to magnitude is a quantitative variable.—**M.R.D.'Amato, 1970)**।

उदाहरणार्थ—इन चरों में वस्तुओं या चीजों के उन गुणों या लक्षणों को शामिल किया जाता है जिसकी मुख्य विशेषता मात्रा होती है। जैसे आयु, किसी कार्य को सीखने के प्रयासों की संख्या आदि। मात्रात्मक चर भी दो प्रकार के हो सकते हैं, निरंतर और खंडित मात्रात्मक चर (Continuous and Discrete Quantatitative Variables)

प्रश्न 10. गुणात्मक चर किसे कहते हैं? संक्षेप में बताएं।

उत्तर—डी. अमेटो के अनुसार ही, **"गुणात्मक चर व चर होते हैं जो मात्रा की दृष्टि से क्रमिक नहीं किये जा सकते या मापे नहीं जा सकते।"** (Qualitative variables are those variables composed of categories which cannot be ordered with respect to magnitude.—**M.R.D.'Amato. 1970)**।

उदाहरणार्थ—धर्म, व्यवसाय, प्रजातियां आदि इस वर्ग में शामिल हैं। वैज्ञानिक अनुसंधानों में मात्रात्मक चरों को अधिक महत्त्व दिया जाता है तथा इनका प्रयोग ही अधिकतर किया जाता है।

2.3 सम्बन्धित साहित्य का सर्वेक्षण
(Review of Related Literature)

[illegible] अनुसंधान में संबंधित साहित्य के पुनरीक्षण की क्या आवश्यकता है? **(M.D.U. 1st Sem. 2013)**

अथवा

[illegible] के सर्वेक्षण का क्या अर्थ है। अनुसंधानकर्ता के लिये सम्बन्धित-साहित्य के पुनरावलोकन क्या महत्त्व है। विवेचना

अथवा

[illegible]-साहित्य पर विस्तारपूर्वक टिप्पणी अथवा नोट लिखें।

अथवा

[illegible] के सर्वेक्षण से आपका क्या अभिप्राय है। इसके महत्त्व तथा सामग्री एवं स्त्रोतों पर प्रकाश डालिये। (K.U.K. 2013)

[illegible] कोई शोधनकर्ता शोधकार्य करने के लिए अग्रसर होता है। तो उसके सामने कई प्रश्न आते हैं जिनका उत्तर प्राप्त [illegible] समस्या से सम्बन्धित साहित्य का सर्वेक्षण सहायक एवं अनिवार्य होता है। सम्बन्धित साहित्य से तात्पर्य वह पुस्तक, [illegible]पत्रिकाएं, प्रकाशित एवं अप्रकाशित शोध ग्रन्थ एवं अभिलेख हैं जिनके अध्ययन के द्वारा वह अपनी समस्या से [illegible] के उत्तर प्राप्त करता है जैसे–समस्या चयन परिकल्पनाओं के निर्माण एवं रूपरेखा के निर्धारण आदि। इसके साथ-साथ [illegible] होता है कि अभी तक उस समस्या पर कितना कार्य हो चुका है, किस-किस क्षेत्र में तथा क्या-क्या विधि इसमें [illegible] थी। उस शोध कार्य के क्या निष्कर्ष निकले व कहाँ तक उपयोगी सिद्ध हुए। अब आगे किस कार्य या पक्ष पर [illegible]। इन सब प्रश्नों के उत्तरों पर सम्बन्धित साहित्य के सर्वेक्षण करने पर प्रकाश डालता है।

[illegible] के पश्चात् ही शोधकर्ता यह निश्चय कर पाता है कि प्रस्तुत शोध ज्ञान की नवीन खोज होगी या पहले के अन्विष्ट [illegible]।

[illegible] साहित्य के अध्ययन के महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए **गुड, बार तथा स्केटस** ने लिखा है–**"जिस प्रकार एक कुशल [illegible] जरूरी है कि वह अपने क्षेत्र में हो रही औषधि सम्बन्धित आधुनिकतम खोजों से परिचित होता रहे, उसी प्रकार [illegible], अनुसंधानकर्ता के लिए भी अपने अध्ययन क्षेत्र से सम्बन्धित सूचनाओं एवं खोजों से परिचित होना आवश्यक है।"** [illegible] डब्लू.आर.बोर्ज ने लिखा है, **"किसी भी क्षेत्र में साहित्य उस आधारशिला के समान है जिस पर सम्पूर्ण भावी कार्य [illegible] यदि सम्बन्धित साहित्य के सर्वेक्षण द्वारा इस आधारशिला को दृढ़ नहीं कर लेते तो हमारे कार्य के प्रभावहीन-एवं [illegible] की संभावना है। अथवा यह पुनरावृत भी हो सकता है।"**

[illegible] साहित्य से सम्बन्धित सूचनाएं अनेक स्त्रोतों से प्राप्त होती हैं जैसे–पुस्तकें, पत्र-पत्रिकाएं, शोध प्रबन्ध, बुलेटिन, [illegible], अंतर्राष्ट्रीय प्रकाशन, राजकीय प्रकाशन, निर्देशिकाएं एवं विषय पर प्रकाशित लेख।

[illegible] के अध्ययन का महत्त्व
[illegible] Study of related Literature)

[illegible] अध्ययन उन सभी सिद्धान्तों, व्याख्याओं और परिकल्पनाओं को विचार प्रदान करता है जो शोधकर्ता की समस्या [illegible] एवं निर्धारण में सहायक होते हैं।

[illegible] के अध्ययन की सर्वोत्तम विधि की जानकारी मिलती है।

[illegible] के ज्ञान कोष में वृद्धि में सहायक होता है।

[illegible] सम्बन्धित तुलनात्मक आँकड़ों को कैसे प्राप्त किया जाए एवं विश्लेषण किया जाए इस प्रकार की जानकारी प्राप्त [illegible]।

[illegible] सर्वेक्षण से शोध क्षेत्र की सीमाएं निर्धारण करने में सहायता प्राप्त होती है।

[illegible] अध्ययन से व्यर्थ एवं अनुपयोगी समस्याओं के चयन से बचाव होता है।

[illegible] उपकरण जो पूर्व अध्ययन में उपयोगी सिद्ध हुए हैं, उनकी जानकारी प्राप्त होती है।

[illegible] सुझाव जो पूर्व शोधकर्ताओं ने इसी प्रकार अग्रिम अध्ययन के लिए दिए होते हैं उनसे मार्गदर्शन प्राप्त किया [illegible] है।

[illegible] शोधकर्ता उन सांख्यिकीय विधियों से अवगत होता है जो परिणामों की वैधता का बोध करा सकती है।

[illegible] साहित्य के अध्ययन से समस्या को विस्तार से समझने एवं परिकल्पना के निर्माण में सहायता मिलती है।

सम्बन्धित-साहित्य की सामग्री या स्त्रोत
(Material or Sources of Related Literature)

इसके अन्तर्गत पत्र पत्रिकाओं में उपलब्ध लेख, निबंध पुस्तिकाएं, सरकारी तथा गैर-सरकारी संस्थानों द्वारा प्रकाशित वार्षिकी एवं बुलेटिन, शोध-ग्रन्थ, स्नातकोत्तर प्रोजेक्ट वर्क रिपोर्टस, शिक्षा सम्बन्धी प्रशासन के प्रकाशन आदि प्राथमिक स्त्रोत हैं।

शिक्षा के ज्ञानकोष (Encylopaedias of Education), शिक्षा सूचीपत्र (Educational Indexes)) संदर्भ ग्रन्थ सूची एवं निर्देशिकाएं (Bibliogrpahies and Directories) शिक्षा सार, (Educational Abstracts) जीवन गाथा सम्बन्धी संदर्भ (Biographical References), उद्धरण-स्त्रोत (Quotation Sources) आदि द्वितीयक स्त्रोत हैं।

सम-सामयिक प्रकाशन के माध्यम से उपलब्ध साहित्य अर्थात् प्राथमिक स्त्रोतों के माध्यम से उपलब्ध सम्बन्धित साहित्य–

1. पत्रिकाओं में उपलब्ध सामायिक साहित्य (Available Literature in Periodicals)–सामायिकी वह प्रकाशन है जो सामान्यतया नियमित समयान्तर से उत्तरोत्तर प्रकाशित होता है। इसके अन्तर्गत केवल पत्रिकाएं, समाचार पत्र मैगजीन आदि ही सम्मिलित नहीं होते वरन इसमें पंचांग, वार्षिक निर्देशिकाएं, डाइरैकटरियां, हैंड बुक, राजकीय अभिलेख, समितियों एवं संघों के प्रकाशन आदि भी सम्मिलित होते हैं।

2. शिक्षा अनुसंधान से संबंधित पुस्तकें (Books Related to Education Research Methods)

1. एजूकेशनल रिसर्च फार क्लास-रूम टीचर्स (Educational Research for Class-room Teachers)
2. एजूकेशन रिसर्च एवं अप्रेजल (Education Research and Appraisal)
3. रिसर्च इन एजूकेशन (Research in Education)
4. एक्शन रिसर्च टू इम्प्रूव स्कूल प्रैक्टिसेज (Action Research to improve School Practices)
5. इन्ट्रोडक्शन टु एजूकेशनल रिसर्च (Introduction to Educational Research)

इन प्रस्तुकों में प्रत्ययों, सिद्धांतों एवम विधियों का विशद वर्णन है।

3. वार्षिक-पुस्तकें एवं सर्वेक्षण-प्रतिवेदन (Books and Survey Reports)–वार्षिक पुस्तकें वर्ष में एक बार प्रकाशित होती हैं। इसमें पृष्ठ भूमिका प्रदान करने वाले शिक्षा लेखों की अपेक्षा सामयिक महत्त्व के तथ्यों पर विस्तृत रूप से जोर दिया जाता है। इसमें निर्देशिकाएं, सर्वेक्षण प्रतिवेदन, हैण्ड बुकें (Hand Books), पंचांग इनमें वार्षिक पुस्तकों की भांति ही सामग्री एवं तथ्य होते हैं। यह राष्ट्रीय, स्थानीय, राजकीय एवम मण्डलीय स्तर पर प्राप्त होते हैं तथा इसमें साख्यिकीय एवं वर्णनात्मक ढंग की शुद्ध तथ्यात्मक सूचनाएं रहती हैं।

वार्षिक पुस्तकें एवं सर्वेक्षण प्रतिवेदन, सामयिक शैक्षिक प्रकाशनों के एक विस्तृत क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करते हैं। अमेरिका में अधिकतर विद्यालय मोनोग्राफों के माध्यम से शैक्षिक अनुसंधानों को प्रकाशित करते हैं। इंग्लैण्ड में भी शिक्षा के अनेक संस्थान मोनोग्राफ एवमं बुलेटिन समय-समय पर प्रकाशित करते हैं। भारतवर्ष के वर्तमान काल में इस प्रकार के साहित्यिक स्त्रोत अपेक्षाकृत सीमित हैं।

द्वितीयक-स्त्रोतों के माध्यम से उपलब्ध सम्बन्धित साहित्य–

1. शिक्षा विश्व ज्ञान कोष (Encyclopaedias of Education)–विश्व ज्ञान-कोष बहुत से ग्रंथों का संकलन होता है जिसमें विभिन्न व्यक्तियों की जीवनगाथा सम्बन्धी तथा सामान्य प्रकार के लेख होते हैं। शिक्षा में भी विश्वकोष के विभिन्न क्षेत्रों की विशेषताओं का समूह होता हैं। शिक्षा के विश्व ज्ञान कोषों में वाल्टर एस. मुनरो के शैक्षिक शोध के लिए विश्व ज्ञान कोष, अमेरिका का हेनरी डी. रिब्लीन तथा एच. श्यूल द्वारा लिखित Encyclopaedia of a Modern Education, पाल मुनरो द्वारा लिखित विश्व का ज्ञान कोष, आस्कर जे. कप्तान का Encyclopadedia of Vocational Guidance आदि मुख्य हैं। शिक्षा का विश्व ज्ञानकोष 1980 भारत सरकार के हिन्दी निदेशालय द्वारा प्रकाशित है।

हमारे देश में अभी तक शैक्षिक अनुसंधान को विश्वकोष जैसा कोई भी ग्रंथ प्रकाशित नहीं हुआ है। कुछ वर्ष पूर्व श्री जे. पी. नायक (J.P. Naik) ने भारतीय शिक्षा का विश्व ज्ञान कोष तैयार करने हेतु प्रारम्भिक प्रयास किया किन्तु वह पूर्ण न हो सका। शिक्षा के क्षेत्र में आगामी शोध की दृष्टि से ऐसे ज्ञानकोष का प्रकाशन हमारे देश में अत्यन्त आवश्यक है।

2. शिक्षा-सार (Education Abstract)–इसमें उन सब लेखों के सार दिए जाते हैं जो महत्त्वपूर्ण पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके हैं एक अनुसंधान कार्य में सहायक होते हैं। अनुसंधानकर्ता अपने विषय से सम्बन्धित लेखों के सार एवं अनुसंधान परिणाम जान सकता है एवं उनसे अपने कार्य में सहायता ले सकता है।

शिक्षा अनुसंधान के क्षेत्र में Indian Education Abstract हिन्दी एवं अंग्रेजी दोनों भाषाओं में प्रकाशित शिक्षा सार है। यह भारतीय शिक्षा मंत्रालय द्वारा प्रकाशित किया जाता है जिसमें 50 भारतीय पत्रिकाओं में प्रकाशित लेखों का सार एवं सूचियां प्रकाशित की जाती हैं। वह शीर्षक जिनके अन्तर्गत यह सूचियां प्रकाशित होती हैं, इस प्रकार हैं जैसे शिक्षा दर्शन मनोविज्ञान, परीक्षण एवं मापन, शिक्षाएं, छात्र एवं छात्र संगठन, शैक्षिक एवम व्यवसायिक निर्देशन, शिक्षक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम, बुनियादी, शिक्षा, स्वास्थ्य एवम शारीरिक शिक्षा, प्राथमिक, व्यवसायिक एवं तकनीकी शिक्षा, उच्च शिक्षा एवं शैक्षिक प्रसारण आदि। Basic Education Abstract में शिक्षा से संबंधित 12 क्षेत्रों में लेख पाँच भाषाओं में प्रकाशित होते हैं। Education Studies and Investigation के अन्तर्गत भी शिक्षा के विभिन्न क्षेत्रों से संबंधित लेख एवं अनुसंधान सार दिए होते हैं।

3. शिक्षा-सूचीपत्र (Educational Indexes)—इसमें सामान्य तथा विशिष्ट सूची पत्र शामिल हैं। भारत में इस प्रकार का पहला प्रकाशन शिक्षा मंत्रालय दिल्ली द्वारा 1949 में एजूकेशन क्वाटरली के नाम से शुरू किया गया था। यह लगभग 15 शैक्षिक पत्रिकाओं से संबंद्ध सूची प्रकाशित करता था। प्रत्येक अंक में 300 से 400 तक प्रविष्टियां होती थीं। अब इसका नाम इंडियन एजूकेशन इंडेक्स हो गया है जो केन्द्रीय सचिवालय के शिक्षा पुस्तकालय से प्रतिमास प्रकाशित होता है और सभी प्रमुख शैक्षिक पत्रों की सूची देती है।

विशिष्ट सूची पत्रों में Education Index जो कि New York America से प्रकाशित होता है सबसे प्रमुख एवं प्रसिद्ध है।

4. संदर्भ-ग्रंथ निर्देशिकाएं (Bibliographies and Directories)—शैक्षिक अनुसंधान के लिए शिक्षा के क्षेत्र में कार्यकताओं के लिए कुछ उपयोगी ग्रंथसूचियां एवं निर्देशिकाएं प्रकाशित की जाती हैं।

'उत्तर भारती' उत्तर प्रदेश में एवं Register of Educational Research in India में भारत के विभिन्न भागों में प्रकाशित शैक्षिक अनुसंधानों की सूची दी जाती है।

इस प्रकार साहित्य के पढ़ने के पश्चात् ही अनुसंधान कर्ता अपने लक्ष्य को तथा लक्ष्य प्राप्ति के मार्ग को ढूंढ़ने में सफल हो सकता है। अतः अनुसंधान कार्य के लिए संबंधित साहित्य का सर्वेक्षण नितांत आवश्यक है।

लघूत्तरात्मक प्रश्न
(Short Answer Type Questions)

प्रश्न 1. साहित्य के सर्वेक्षण से आपका क्या अभिप्राय है?

उत्तर—जब कोई शोधनकर्ता शोधकार्य करने के लिए अग्रसर होता है। तो उसके सामने कई प्रश्न आते हैं जिनका उत्तर प्राप्त करने में शोध समस्या से सम्बन्धित साहित्य का सर्वेक्षण सहायक एवं अनिवार्य होता है। सम्बन्धित साहित्य से तात्पर्य वह पुस्तक, विश्वकोष, पत्र-पत्रिकाएं, प्रकाशित एवं अप्रकाशित शोध ग्रन्थ एवं अभिलेख हैं जिनके अध्ययन के द्वारा वह अपनी समस्या से सम्बन्धित प्रश्नों के उत्तर प्राप्त करता है जैसे—समस्या चयन परिकल्पनाओं के निर्माण एवं रूपरेखा के निर्धारण आदि। इसके साथ-साथ उसे यह भी देखना होता है कि अभी तक उस समस्या पर कितना कार्य हो चुका है, किस-किस क्षेत्र में तथा क्या-क्या विधि इसमें प्रयुक्त की गई थीं। उस शोध कार्य के क्या निष्कर्ष निकले व कहाँ तक उपयोगी सिद्ध हुए। अब आगे किस कार्य या पक्ष पर कार्य हो सकता है। इन सब प्रश्नों के उत्तरों पर सम्बन्धित साहित्य के सर्वेक्षण करने पर प्रकाश डालता है।

सर्वेक्षण के पश्चात् ही शोधकर्ता यह निश्चय कर पाता है कि प्रस्तुत शोध ज्ञान की नवीन खोज होगी या पहले के अन्विष्ट ज्ञान की पुष्टि है।

सम्बन्धित साहित्य के अध्ययन के महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए **गुड, बार तथा स्केटस** ने लिखा है—**"जिस प्रकार एक कुशल चिकित्सक के लिए जरूरी है कि वह अपने क्षेत्र में हो रही औषधि सम्बन्धित आधुनिकतम खोजों से परिचित होता रहे, उसी प्रकार शोध के जिज्ञासु छात्र, अनुसंधानकर्ता के लिए भी अपने अध्ययन क्षेत्र से सम्बन्धित सूचनाओं एवं खोजों से परिचित होना आवश्यक है।"**

इसी प्रकार **डब्ल्यू.आर.बोर्ज** ने लिखा है, **"किसी भी क्षेत्र में साहित्य उस आधारशिला के समान है जिस पर सम्पूर्ण भावी कार्य आधारित होता है। यदि सम्बन्धित साहित्य के सर्वेक्षण द्वारा इस आधारशिला को दृढ़ नहीं कर लेते तो हमारे कार्य के प्रभावहीन एवं अमान्य होने की संभावना है। अथवा यह पुनरावृत भी हो सकता है।"**

साहित्य से सम्बन्धित सूचनाएं अनेक स्त्रोतों से प्राप्त होती हैं जैसे—पुस्तकें, पत्र-पत्रिकाएं, शोध प्रबन्ध, बुलेटिन, वार्षिकी, अंतर्राष्ट्रीय प्रकाशन, राजकीय प्रकाशन, निर्देशिकाएं एवं विषय पर प्रकाशित लेख।

का ज्ञान कोष, आस्कर जे. कप्तान का Encyclopadedia of Vocational Guidance आदि मुख्य हैं। शिक्षा का विश्व ज्ञानकोष (1960) भारत सरकार के हिन्दी निदेशालय द्वारा प्रकाशित है।

हमारे देश में अभी तक शैक्षिक अनुसंधान को विश्वकोष जैसा कोई भी ग्रंथ नहीं प्रकाशित हुआ है। कुछ वर्ष पूर्व श्री जे. पी. नायक (J.P. Naik) ने भारतीय शिक्षा का विश्व ज्ञान कोष तैयार करने हेतु प्रारम्भिक प्रयास किया किन्तु वह पूर्ण न हो सका। शिक्षा के क्षेत्र में आगामी शोध की दृष्टि से ऐसे ज्ञानकोष का प्रकाशन हमारे देश में अत्यन्त आवश्यक है।

2. शिक्षा-सार (Education Abstract)—इसमें उन सब लेखों के सार दिए जाते हैं जो महत्त्वपूर्ण पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके हैं एक अनुसंधान कार्य में सहायक होते हैं। अनुसंधानकर्ता अपने विषय से सम्बन्धित लेखों के सार एवं अनुसंधान परिणाम पढ़ सकता है एवं उनसे अपने कार्य में सहायता ले सकता है।

शिक्षा अनुसंधान के क्षेत्र में Indian Education Abstract हिन्दी एवं अंग्रेजी दोनों भाषाओं में प्रकाशित शिक्षा सार है। यह भारतीय शिक्षा मंत्रालय द्वारा प्रकाशित किया जाता है जिसमें 50 भारतीय पत्रिकाओं में प्रकाशित लेखों का सार एवं सूचियां प्रकाशित की जाती हैं। वह शीर्षक जिनके अन्तर्गत यह सूचियां प्रकाशित होती हैं, इस प्रकार हैं जैसे शिक्षा दर्शन मनोविज्ञान, परीक्षण एवं मापन, शिक्षण, छात्र एवं छात्र संगठन, शैक्षिक एवम व्यवसायिक निर्देशन, शिक्षक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम, बुनियादी, शिक्षा, स्वास्थ्य एवम शारीरिक शिक्षा, प्राथमिक, व्यवसायिक एवं तकनीकी शिक्षा, उच्च शिक्षा एवं शैक्षिक प्रसारण आदि। Basic Education Abstract में शिक्षा से संबंधित 12 क्षेत्रों में लेख पाँच भाषाओं में प्रकाशित होते हैं। Education Studies and Investigation के अन्तर्गत भी शिक्षा के विभिन्न क्षेत्रों से संबंधित लेख एवं अनुसंधान सार दिए होते हैं।

2.4 परिकल्पना/उपकल्पना : एक अच्छी परिकल्पना की अवधारणा, प्रकार, स्त्रोत, विशेषताएँ तथा परिकल्पना का निर्माण (Hypothesis : Concept, Types, Sources, Characteristics of a Good Hypothesis and Formulation of Hypothesis)

प्रश्न 1. उपकल्पना या परिकल्पना से आपका क्या अभिप्राय है? उपकल्पना के मुख्य लाभों तथा अनुसंधान में इसके महत्त्व की विवेचना कीजिए।

अथवा

उपकल्पना या परिकल्पना का क्या अर्थ है? अनुसन्धान में इसके महत्त्व तथा इसकी कमियों या दोषों पर प्रकाश डालिए।

उत्तर–**परिकल्पना/उपकल्पना का अर्थ (Meaning of Hypothesis)**—अनुसंधान की प्रक्रिया में समस्या के कथन के तुरंत बाद उपयुक्त कल्पना की रचना की आवश्यकता होती है। परिकल्पना के अभाव में वैज्ञानिक अध्ययन प्रायः संभव नहीं है। इसका कारण है यह कि समस्या का स्वरूप अधिकतर अत्यधिक विस्तृत तथा विसरित (Diffused) होता है। ऐसी स्थिति में उसके व्यापक क्षेत्र को घटाना व छोटा करना बहुत ही जरूरी होता है, जिससे अध्ययन का स्वरूप, सूक्ष्म तथा गहन हो सके। यदि परिकल्पना द्वारा मार्गदर्शन नहीं किया जाता है तो अनुसंधानकर्ता समस्या के अध्ययन के लिए इधर-उधर भटकता रहता है और इस प्रक्रिया में अनेक अनावश्यक आंकड़े इकटठे कर लेता है, क्योंकि परिकल्पना के अभाव में समस्या से संबंधित आवश्यकता तथ्यों का उसे स्पष्ट तथा निश्चित ज्ञान नहीं होता। वैज्ञानिक ज्ञान केवल घटनाओं का अवलोकन या तथ्यों के एकत्रित करने से ही प्राप्त नहीं होता बल्कि उसके लिए परिकल्पना या उपकल्पना या प्राकल्पना का सहारा लिया जाता है। इसी आधार पर परिकल्पना को पूर्व चिंतन या सामाजिक अनुसंधान की प्राथमिक सीढ़ी भी कहते हैं। परिकल्पना ही वह विचार है जो सामाजिक अनुसंधान को जन्म देता है।

परिकल्पना शब्द अंग्रेजी के हाइपोथैसिस (Hypothesis) शब्द का हिन्दी रूपान्तर है जो दो शब्दों से मिलकर बना है : Hypo जिसका अर्थ है–सम्भावित या जिसकी पुष्टि की जानी है तथा Thesis जिसका अर्थ है–समस्या के समाधान का कथन। इस प्रकार हाइपोथैसिस (Hypothesis) का शाब्दिक अर्थ संभावित कथन से है जो समस्या का समाधान सुझाता है।

परिकल्पना/उपकल्पना की परिभाषाएँ
(Definitions of Hypothesis)

अलग-अलग विद्वानों ने परिकल्पना को परिभाषित करने के लिए अपने अलग-अलग ही विचार दिए हैं। जो निम्नलिखित हैं :

1. टाउन सैड (Town Shed) के अनुसार, **"परिकल्पना एक समस्या का प्रस्तावित उत्तर होती है।"**

2. **गुडे तथा स्केट्स (Goode and Scates)** के अनुसार, **"परिकल्पना एक निपुण अटकल या अनुमान के रूप में निर्मित होती है। जिसे अस्थायी रूप से निरीक्षित तथ्यों की व्याख्या तथा अग्रिम शोध के मार्गदर्शन के लिए स्वीकार किया जाता है।"** ("A hypothesis is a shrewed guess of inference that is formulated and provisionally adopted to explain observed facts for conditions and to guide in further investigation."—Goode and Scates)
3. **पी.बी. यंग (P.V. Young)** के अनुसार, **"एक कार्यवाहक केन्द्रीय विचार है जो उपयोगी खोज का आधार बनती है कार्यात्मक उपकल्पना के नाम से जानी जाती है।"** ("A provisional central idea which becomes the basis for fruitful investigation is known as a working Hypothesis."—P.V. Young)।
4. **लुण्डवर्ग (Lundberg)** के अनुसार, **"उपकल्पना एक प्रयोग संबंधी सामान्यीकरण है जिसकी वैधता की जाँच होती है अपने मूल रूप में उपकल्पना एक अनुमान अथवा कल्पनात्मक विचार हो सकता है जो आगे के अनुसंधान के लिए आधार बनता है।"** ("A hypothesis is a tentative generalization the validity of which which remains to be tested. In its most elementry stage the Sypothesis may be any bunch guess, imaginative ideas which becomes the basis for further investigation."—Lundberg)
5. **मैक्गुडगन (Mackgoodgun)** के अनुसार, **"परिकल्पना दो या दो से अधिक चरों के सम्भावित संबंध का एक परीक्षण योग्य कथन होती है।"**
6. **एडवर्डस (Adburdsh)** के अनुसार **"परिकल्पना दो या दो से अधिक चरों के संभाव्य संबंध विषय में कथन होती है। यह एक प्रश्न का ऐसा प्रयोग संबंधी उत्तर होता है। जिससे चरों के संबंध का चलता है।"**
7. **बर्नाड फिलिप्स (Burnard Philipsh)** के अनुसार, **"वे किसी घटना में विद्यमान संबंधों के विषय में अस्थायी कथन है, प्राकल्पनाओं को प्रकृति से पूछे हुए प्रश्न कहा जाता है और वे वैज्ञानिक अनुसंधान के प्राथमिक महत्त्व के यंत्र होते हैं।"**
8. **गुडे एवं हाट (Goode and Hatt)** के अनुसार, **"उपकल्पना एक प्रस्तावना है जिसकी उपयुक्तता की परीक्षा की जा सकती है।"**
9. **एम.एच. गोपाल (M.H. Gopal)** के अनुसार, **"यह ज्ञात व प्राप्त तथ्यों के एक सामान्य प्रेक्षण पर आधारित एक कार्यवाहक या अस्थायी उपचार या हल होता है जो कि कुछ विशेष घटनाओं को समझाने व अन्य खोज में मार्गदर्शन करने के लिए अपनाया जाता है।"**

उपर्युक्त परिभाषाओं से परिकल्पना का अर्थ स्पष्ट हो जाता है। सामाजिक अनुसंधान में इसका विशेष महत्त्व है। उपकल्पना की तटस्थ जाँच ही वैज्ञानिक पद्धति का एक मात्र उद्देश्य होता है। इसके अर्थ जानने के बाद सामाजिक अनुसंधान में इसका महत्त्व जानना जरूरी है।

हर वैज्ञानिक अनुसंधान में परिकल्पना का महत्त्व होता है। वास्तव में किसी भी वैज्ञानिक अनुसंधान की सफलता अथवा असफलता मुख्य रूप से उपकल्पना पर निर्भर होती है। संपूर्ण वैज्ञानिक अनुसंधान का मुख्य उद्देश्य निर्धारित उपकल्पना का तथ्यात्मक परीक्षण करना होता है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि बिना सही उपकल्पना के सारा श्रम व्यर्थ जाता है।

उपकल्पना/परिकल्पना का महत्त्व/लाभ/कार्य एवं दोष या सीमाएं (Importance/Merits and Demerits or Limitations of Hypothesis)

विभिन्न विद्वानों का कहना है कि किसी भी अध्ययन को व्यवस्थित ढंग से तथा वैज्ञानिक ढंग से अध्ययन करते हुए परिकल्पना का प्रयोग करना आवश्यक होता है। परिकल्पना का मुख्य लाभ एवं कार्य **निम्नलिखित हैं :**

बरदल एवं घिसौली ने परिकल्पना के निम्नलिखित कार्य बताए हैं :

(i) यह एक व्याख्या के रूप में समस्याओं का समाधान करती है।
(ii) यह अनुसंधान के लिए एक प्रेरक का काम करती है।
(iii) यह अध्ययन पद्धति के विकास में सहायता करती है।
(iv) यह औद्योगिक विधियों के मूल्यांकन की कसौटी के रूप में होती है।
(v) यह एक संगठनात्मक शक्ति के रूप में कार्य करती है।

(vi) यह समस्या के क्षेत्र को सीमाबद्ध करती है और इससे तर्क शक्ति व आंकड़ों के संग्रह में सहायता प्राप्त होती हैं :
(vii) चरों में विशिष्ट संबंधों की जानकारी प्राप्त होती है।
(viii) सिद्धान्तों की रचना में सहायक होती है।
(ix) इनसे वैज्ञानिक निष्कर्षों एवं तथ्यों की जानकारी मिलती है।

वानडालेन ने परिकल्पना के निम्नलिखित कार्य बताए हैं :–

(i) परिकल्पना द्वारा वैज्ञानिक शोध कार्य किया जा सकता है। यह समस्या का समाधान प्रस्तुत करती है।
(ii) यह समस्या का सीमांकन करती है। शोधकर्ता समस्या के तथ्यात्मक एवं संप्रत्यात्मक तत्त्वों को गहन रूप में समझ सकता है।
(iii) यह शोधकर्ता को निर्देशन देती है एवं कार्य की रूपरेखा प्रस्तुत करती है।
(iv) परिकल्पना तथ्यों की सार्थकता का निर्धारण करती है एवं शोधकर्ता को रचनात्मक कार्यों के लिए प्रोत्साहित करती है।
(v) परिकल्पना शोध कार्य की दिशा, प्रदत्तों के संकलन में सहायता एवं उपकरण, परीक्षण एवं प्रविधियों के प्रयोग में सहायक होती है।
(vi) परिकल्पना निष्कर्षों को आधार प्रदान करती है।
(vii) शोध परिकल्पनाओं के नए अनुसंधान को प्रोत्साहन मिलता है।

अनुसंधान में परिकल्पना का महत्त्व
(Importance of Hypothesis in Research)

आधुनिक विज्ञानों में परिकल्पनाओं को महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है, क्योंकि इसके बिना विज्ञान का अस्तित्व ही संदेह के घेरे में आ जाता है। **जहोदा और कुक (Jahoda and Cook)** के शब्दों में, **"प्राकल्पनाओं का निर्माण तथा प्रामाणिकता वैज्ञानिक अध्ययन का उद्देश्य है।"** इससे स्पष्ट है कि परिकल्पना अनुसंधानकर्ता और वैज्ञानिकों को पथभ्रष्ट होने से बचाने के लिए **"प्रकाश-स्तंभ"** के समान है। परिकल्पना का महत्त्व निम्नलिखित कारणों से स्वयं ही स्पष्ट हो जाएगा :

1. अनुसंधानकर्ता का मार्गदर्शन (Guide of Researcher)—अनुसंधानकर्ता अपनी अध्ययन वस्तु के संबंध में जो पूर्वज्ञान प्राप्त करता है। वही उसकी उपकल्पना का आधार होता है। उस कल्पना के पूर्वज्ञान के आधार पर अनुसंधानकर्ता को यह जानकारी होती है कि उसे क्या करना है और किस क्षेत्र में किस सत्य की खोज करनी है। इस प्रकार 'उपकल्पना' एक अनुसंधानकर्ता के लिए मार्गदर्शन का कार्य करती है।

2. अध्ययन में निश्चितता (Definiteness in the Study)—परिकल्पना के द्वारा अध्ययन की सीमा लगभग सुनिश्चित हो जाती है। इसके बन जाने पर अध्ययनकर्ता को यह ज्ञान हो जाता है कि उसे क्या अध्ययन करना है, कितना अध्ययन करना है और कौन से तथ्यों का संकलन करना है। परिकल्पना से यह भी ज्ञात हो जाता है कि अनुसंधान की दिशा क्या है। इससे अनुसंधानकर्ता व्यर्थ के आंकड़े, तथ्यों आदि को एकत्र करने से बच जाता है। इसीलिए कहते हैं कि उपकल्पना धन और समय की बचत करने का एक साधन भी है।

3. अध्ययन वस्तु की स्पष्टता (Clarity of Research Matter)—उपकल्पना के द्वारा ही अनुसंधानकर्ता अपनी अध्ययन वस्तु का ज्ञान प्राप्त करता है। इसी के द्वारा अध्ययन वस्तु के संबंध में स्पष्ट विचारों को जानने में अनुसंधानकर्ता को सहायता मिलती है। उपकल्पना के द्वारा ही उसे पता चलता है कि उनकी अध्ययन-वस्तु क्या है और उसको क्या करना है और किस क्षेत्र में किस प्रकार से कार्य करना है।

4. अनुसंधान के क्षेत्र का निर्धारण (Restriction deciding Area of Research)—एक समय में एक अनुसंधानकर्ता विषय से संबंधित सभी पहुलओं का अध्ययन नहीं कर सकता। अतः उसे एक उपकल्पना निर्धारित करनी पड़ती है। उपकल्पना ही अनुसंधानकर्ता के अध्ययन-क्षेत्र की सीमा तय करती है। उपकल्पना की सहायता से वह अध्ययन वस्तु के विशेष क्षेत्र का अध्ययन करता है और ऐसा करके वह उस विशेष क्षेत्र का संपूर्ण ज्ञान प्राप्त कर लेता है। इस प्रकार उपकल्पना अनुसंधानकर्ता का क्षेत्र सीमित करके उन्हीं बातों पर ध्यान केन्द्रित करती है जो कि शोधकर्ता में पूर्ण सफलता के लिए जरूरी है।

5. संबंधित तथ्यों के संकलन में सहायक (Helpful in the Collection of Data)—उपकल्पना का निर्माण हो जाने के बाद हम तथ्यों का संकलन मनमाने ढंग से नहीं करते, बल्कि उन्हीं तथ्यों का संकलन करते हैं जो हमारी अध्ययन वस्तु के लिए उपयोगी

होते हैं और अनुपयोगी तथ्यों के संकलन में समय बर्बाद होने से बच जाता है। इस प्रकार परिकल्पना हमें संबंधित तथ्यों के [illegible] में सहायता प्रदान करती है और इधर-उधर भटकने से बच जाते हैं।

श्रीमती पी.वी. यंग के शब्दों में, **"उपकल्पना के प्रयोग से उन तथ्यों की अंधी खोज में अंधाधुंध संकलन पर नियंत्रण [illegible] है जो बाद में अध्ययन किए जाने वाली समस्या के लिए अप्रासंगिक हो।"**

6. सत्य की खोज में सहायक (Helpful in Search of Truth)—उपकल्पना अनुसंधानकर्ता को सत्य की खोज [illegible] सहायता प्रदान करती है। उपकल्पना के निर्माण के बाद अनुसंधानकर्ता परीक्षण द्वारा संबंधित के संबंध में सत्य व असत्य [illegible] प्रदान करता है। उपकल्पना की सत्यता प्रमाणित हो जाना ही निष्कर्ष की प्राप्ति होता है। असत्य होने पर उपकल्पना को [illegible] दिया जाता है। इस प्रकार उपकल्पना एक अनुसंधानकर्ता को सत्य की खोज करने में सहयोग देती है। इसके महत्त्व के [illegible] एवं हाट ने लिखा है, **"बिना उपकल्पना के अनुसंधान एक अनिर्दिष्ट विचारहीन भटकने के समान है। उसके परिणामों को [illegible] वाले तथ्यों में नहीं रखा जा सकता है। उपकल्पना सिद्धान्त और ऐसी खोज के बीच में आवश्यक कड़ी है जो अधिक ज्ञान [illegible] में सहायक होती है।"**

उपर्युक्त विवरण के बाद हम कह सकते हैं कि उपकल्पना ही सामाजिक अनुसंधान का आधार है क्योंकि सामाजिक [illegible] का आरंभ और अंत इसी से होता है।

उपकल्पना/परिकल्पना के दोष या सीमाएं (Demerits or Limitations of Hypothesis)

परिकल्पनाओं का महत्त्व और उनकी उपयोगिता सर्वविदित है। इसके बिना किसी विज्ञान की कल्पना नहीं की जा [illegible] इतना सब होते हुए भी उपयोगिता और सार्थकता की अपनी सीमाएँ हैं जिनका उल्लंघन करके उनका उपयोग लाभप्रद न [illegible] उपकल्पना हानिकारक भी हो सकती है।

कभी-कभी अनुसंधानकर्ता उपकल्पना में प्राप्त तथ्यों को तोड़-मरोड़ कर अपने लाभ के अनुसार संकलित करता है। [illegible] घातक होती है और उपकल्पना के प्रयोग का दोष कहीं जाती है। यदि दोषपूर्ण ढंग से उपकल्पना का प्रयोग किया जाएगा तो [illegible] परे अनुसंधान का उद्देश्य ही चौपट हो जाता है। इसी के संबंध में विद्वानों के विचार इस प्रकार हैं :

श्री वैस्टावे (Westaway) के अनुसार, **"उपकल्पनाएं वे लोरिया हैं जो गाना गाकर सुला देती हैं।"** ("Hypothe[illegible] the cradle songs which bull the unway to sleep."—**Westaway**)

डा. विवासी के अनुसार, **"जागृत रहो, आँखें खोलकर वास्तविक तथ्यों को उनके वास्तविक रूप में देखो और उन्हीं के [illegible] पर परिकल्पनाओं की जाँच करो।"**

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि उपकल्पनाओं के अन्दर अपनी ओर से कोई परिवर्तन नहीं करना चाहिए [illegible] इसका प्रयोग सावधानीपूर्वक करना चाहिए, अन्यथा वह लाभदायक होने की अपेक्षा हानिकारक भी हो सकती है।

परिकल्पनाओं की कुछ सीमाएं हैं जो निम्नलिखित हैं—

1. अनुसंधानकर्ता परिकल्पना को ही अंतिम पथ प्रदर्शक मानकर तथ्यों को एकत्रित करने लगता है। अनुसंधान [illegible] प्रवृत्ति वैज्ञानिक विरोधी है।
2. कई बार अनुसंधानकर्ता अपनी नासमझी या अनुभव की कमी के कारण ऐसे तथ्यों को इकट्ठा करने लगता है [illegible] में शोध कार्य के लिए लाभप्रद नहीं रहते।
3. वास्तविक तथ्यों के आधार पर परिकल्पना को प्रस्तुत न करके अनुसंधानकर्ता तथ्यों को अपने हिसाब से [illegible] करके प्रस्तुत करता है तो उससे उपकल्पना के प्रयोग से शोधकार्य का उद्देश्य चौपट हो सकता है।
4. अध्ययनकर्ता अपनी रुचि के अनुकूल ही अपना दृष्टिकोण भी बना लेता है जो इसके अध्ययन को अवश्य ही [illegible] करता है। इसी कारण परिकल्पना में हमेशा तटस्थता तथा वैषयिकता (Objectivity) हमेशा नहीं रह पाती।
5. **वेस्टोन (Weston)** के अनुसार, **"अनुसंधानकर्ता की परिकल्पना में ही नहीं खो जाना चाहिए, बल्कि अपने [illegible] प्रति सर्तक रहना चाहिए।"**

प्रश्न 2. एक अच्छी, व्यावहारिक या उपयोगी परिकल्पना की मुख्य विशेषताएं कौन-कौन सी हैं? विवेचना कीजिए।

अथवा

एक अच्छी या व्यावहारिक परिकल्पना में कौन-कौन सी विशेषताएं होनी चाहिएं? वर्णन कीजिए।

उत्तर–व्यावहारिक/शुद्ध/कार्यवाहक/उपयोगी परिकल्पना के लक्षण/विशेषताएं (Characteristics of Working/Good/Useful Hypothesis)–परिकल्पना मनुष्य के मन एवं विचार पर आधारित होती है। जिसकी सत्यता की जाँच की जाती है। अगर परिकल्पना की जाँच नहीं हो सकती है तो उसे वैज्ञानिक दृष्टि से कोई महत्त्व नहीं दिया जाता है। गुडे एवं हाट ने व्यावहारिक उपकल्पना में लिखा है कि **"वैज्ञानिक मन में अकेले तथा सामूहिक उत्सवों में, एकांत क्षणों में अथवा व्यस्तता के समय अनेक प्रकार की परिकल्पनाएं उत्पन्न होती हैं। इसमें अधिकतर तो यूं ही समाप्त हो जाती हैं। उनका विज्ञान की उन्नति पर कोई महत्त्वपूर्ण प्रभाव नहीं पड़ता। केवल निश्चित प्रभावों के द्वारा ही यह संभव है कि दोषपूर्ण परिकल्पनाओं को अच्छी परिकल्पनाओं से अलग किया जा सके।"**

एक व्यावहारिक या उपयोगी उपकल्पनाओं के **निम्नलिखित** लक्षण या विशेषताएं हैं :

1. एक व्यावहारिक परिकल्पना स्पष्ट, निश्चित एवं जाँच-पड़ताल के योग्य होनी चाहिए (A Working Hypothesis Should be Clear, Definite and Variable) : यह एक व्यावहारिक उपकल्पना की सबसे पहली तथा सबसे अनिवार्य विशेषताएं हैं। परिकल्पना भाषा तथा विचार की दृष्टि से स्पष्ट, निश्चित एवं जाँच-पड़ताल योग्य होनी चाहिए। उदाहरण के लिए अगर यह कहा जाए कि सांप्रदायिक दंग विभिन्न धर्मों के लोगों के बीच किसी बात पर पैदा होने वाले तनाव के कारण होते हैं। जब तक तनाव का अर्थ निश्चित न हो जाए तो परिकल्पना की जाँच नहीं की जा सकती है। अतः परिकल्पना की प्रामाणिकता जाँच आवश्यक है। विज्ञान सत्यापन पर ही पूरी तरह से निर्भर है। विज्ञान से बाहर अब भी कुछ ऐसी उपकल्पनाएं बनाई जाती हैं। जिनकी सत्यता की जांच नहीं की जा सकती। जैसे आत्मा और परमात्मा का अस्तित्व। इस तरह से विज्ञान में एक वैध परिकल्पना के लिए निश्चितता, परिष्करण व सत्यापन योग्य होना जरूरी है।

2. उपलब्ध अनुसंधान प्रणालियों से संबंधित (Related with existing Research Technique) : परिकल्पना के निर्माण के साथ-साथ उसकी जाँच करने के लिए अनुसंधान प्रणालियों का होना जरूरी है। अगर परिकल्पना की जाँच उपलब्ध प्रणालियों के द्वारा न हो सके, तो उसे अव्यावहारिक अनुपयोगी माना जाता है। गुडे एवं हाट (Goode and Hatt) के अनुसार, **"जो सिद्धान्तशास्त्री यह नहीं जानता है कि उसकी परिकल्पना के सत्यापन के लिए कौन-कौन सी प्रणालियाँ उपलब्ध हैं, यह व्यावहारिक तर्क के निर्माण में असफल रहता है?"**

उदाहरण के लिए अगर हम मनुष्य के व्यक्तित्व के विकास का पता लगाना चाहते हैं और हमारे पास इसकी जाँच के लिए प्रविधियां नहीं हैं तो हम मनुष्य के व्यक्तित्व के विकास का पता नहीं लगा सकते।

परिकल्पना का अनुसंधान प्रणालियों के अनुकूल होना हमेशा जरूरी नहीं है। अगर कोई अनुसंधानकर्ता बड़ी महत्त्वपूर्ण समस्या शुरू करे तो बाद में उसके सत्यापन एवं उसके माप की प्रविधियां खोजी जा सकती है। जैसे मार्क्स की वर्गहीन समाज संबंधी परिकल्पना, दुर्खीम का आत्महत्या संबंधी सिद्धान्त। दोनों सिद्धान्तों की जाँच की उचित प्रविधियों की खोज बहुत बाद में हुई। गुडे व हाट ने सही लिखा है, **"बहुत से गंभीर सामाजिक विवादों में अनुसंधान की सीमाओं को बराबर चुनौती दी जाती रहती है क्योंकि बहुत सी समस्याओं की खोज करना आवश्यक होता है चाहे उसकी खोज असंभव ही क्यों न हो।"**

3. सिद्धान्तों से सम्बन्धित (Related with Theories) : एक अच्छी व्यावहारिक परिकल्पना प्रचलित सिद्धान्तों के अनुसार होनी चाहिए, क्योंकि सिद्धान्तों के साथ असंबंधित होने की दशा में प्राप्त आंकड़ों का संकलन और उस पर आधारित परिणाम अव्यवस्थित हो जाते हैं और यथार्थ परिणाम प्राप्त नहीं होते हैं। गुडे एवं हाट ने लिखा है, **"इस विषय की अवहेलना सामाजिक अनुसंधान के आरंभिक विद्यार्थी कर जाते हैं। उनके चुनाव में इस बात की संभावना अधिक होती है कि वे इस प्रकार के अध्ययन विषय को चुन लें जो कि रुचिकर और आकर्षक हों। ऐसा करते समय वे इस बात ध्यान में नहीं रखते हैं कि उनका यह शोध-कार्य वास्तव में सामाजिक संबंधों से सम्बद्ध किन्हीं विद्यमान सिद्धान्तों को गलत प्रमाणित करने या सही प्रमाणित करने अथवा उनकी पुष्टि करने में सहायक होगा भी या नहीं। पर एक विज्ञान तभी संचयी बन सकता है जबकि विद्यमान तथ्य व सिद्धान्त समूह पर सुप्रतिष्ठित हों।"**

4. परिकल्पना उपयुक्त एवं सरल होनी चाहिए (It should be Useful and Simple) : परिकल्पना के इस गुण को विलियम ओकम का उस्तरा (Occam's Razer) कहा जाता है। इसका अभिप्राय यह है कि परिकल्पना रेजर की धार की समान तीक्ष्ण एवं निश्चित होनी चाहिए। ओकम 14वीं शताब्दी का अंग्रेज दार्शनिक था। उसने इस बात पर बल दिया है कि परिकल्पना के निर्माण

में किसी घटना के स्पष्टीकरण के लिए जिन कारणों की संभावना है। उनमें से एक भी कम या ज्यादा नहीं होना चाहिए। अतः सरलता एवं निश्चितता के लिए उपस्थित समस्या का पूरा एवं स्पष्ट ज्ञान होना चाहिए। **पी.वी.यंग** ने इस संबंध में कहा है, **"यदि अनुसंधानकर्ता गहन रूप से समस्या से परिचित है तो वह सरलतापूर्वक परिकल्पना का निर्माण कर सकता है। सरलता एक तेज धार वाला यंत्र है जो व्यर्थ की परिकल्पनाओं एवं विवेचन को काट सकता है।"**

5. सर्वेक्षण द्वारा जाँच की सुविधा (Facility of Validation of Survey) : परिकल्पना ऐसी होनी चाहिए कि उससे प्राप्त तथ्यों की जाँच-पड़ताल अच्छे ढंग से की जा सके। वह एक सदाचार तथा आदर्श का वर्णन मात्र नहीं होना चाहिए। जैसे : यह कहना कि सभी सरकारी अधिकारी भ्रष्टाचारी हैं। विषय प्रधानता एवं सर्वेक्षण द्वारा जाँच की सुविधा एक व्यावहारिक परिकल्पना की महत्त्वपूर्ण विशेषता है।

6. सत्यापित करने योग्य परिकल्पना (Hypothesia should be Verificationable) : एक व्यावहारिक परिकल्पना वह ही मानी जाती है कि जिसको सरलता से सत्यापित किया जा सके। क्योंकि इसके आधार पर प्राप्त निष्कर्ष ही अनुसंधान का उद्देश्य होता है। सत्यापित न होने वाली उपकल्पनाएं निरर्थक होती हैं। जैसे : आत्मा अमर है।

7. परिकल्पना विद्यमान समस्या का हल खोजने वाली होनी चाहिए (It should be Problem Solving) : अनुसंधान के द्वारा समस्या का समाधान खोजा जाता है और इसके लिए परिकल्पना का निर्माण किया जाता है। इसीलिए अगर समस्या से संबंधित परिकल्पनाओं के आधार पर उत्तर प्राप्त नहीं हुए तो परिकल्पनाएं अच्छी नहीं मानी जाती हैं। अतः एक व्यावहारिक परिकल्पना में विद्यमान समस्या का हल खोजने की क्षमता होनी चाहिए।

8. परिकल्पना तथ्यों की उपलब्धता पर आधारित होनी चाहिए (It should be based on Existing Datas) : परिकल्पना के लिए सर्वप्रथम एक वास्तविक घटना होनी चाहिए तथा इसके बारे में सारे तथ्य उपलब्ध होने चाहिएं और तथ्यों का निरीक्षण भी निष्पक्ष भाव से होना चाहिए। निरीक्षण के बाद उनकी व्याख्या की जानी चाहिए तथा व्याख्या के लिए ही परिकल्पनाएं बनाई जाती हैं। हर घटना के कारणों का प्रत्यक्ष रूप से पता होना चाहिए। उदाहरण के लिए परमाणु हमें दिखाई नहीं देते। लेकिन फिर भी घटनाओं का कारण तो वे हैं ही। सृष्टि रचना का परमाणु मुख्य कारण है। अप्रत्यक्ष कारण परोक्ष रूप से प्रभावित होते हैं। इस तरह किसी घटना का वास्तविक कारण का होना जरूरी है। इसे Veracause कहते हैं। अतः परिकल्पना का आरंभ तथ्यों से होना चाहिए और तथ्यों से ही इसकी जाँच-पड़ताल होनी चाहिए। परिकल्पना को तर्क युक्त एवं तथ्यों के अनुकूल होना चाहिए। तथ्य इस तरह परिकल्पना के प्राण हैं। विज्ञान के क्षेत्र में कुछ उपकल्पनाएं तथ्यों पर आधारित नहीं होतीं इन्हें प्रतिनिधि उपकल्पनाएं कहा जाता है।

9. एक व्यावहारिक परिकल्पना में विरोधाभास नहीं होना चाहिए (A working Hypothesis should not contain any Self-Contradiction) : एक व्यावहारिक परिकल्पना को विरोधी न होकर आत्मसंगत होना चाहिए। आत्म विरोधी परिकल्पना अव्यावहारिक तथा अशुद्ध होती है। उदाहरण के लिए घर का सामान चोरी होने पर यह परिकल्पना करना कि उसे भूत ले गए या हवा में खुद ही उड़ गया है। इस प्रकार की तर्क विरोधी परिकल्पना अशुद्ध, युक्तिहीन तथा हास्यास्पद होगी। इसीलिए परिकल्पना में विरोधाभास नहीं होना चाहिए।

10. शून्य परिकल्पना सबसे अच्छी होती है (Zero Hypothesis is Best) : दिशा का निर्देशन न होने के कारण शून्य परिकल्पना सबसे अच्छी मानी जाती है। अनुसंधानकर्ता स्वाभाविक रूप से अपना निष्कर्ष स्पष्ट करता है। वह सत्य एवं असत्य प्रमाणित करने के लिए इकट्ठा नहीं होता।

प्रश्न 3. परिकल्पना का क्या अर्थ है? परिकल्पना के मुख्य प्रकारों, स्रोतों तथा इनके निर्माण में आने वाली कठिनाइयों की विवेचना कीजिए।

अथवा

परिकल्पना के अर्थ को स्पष्ट करते हुए परिकल्पना के मुख्य प्रकारों, स्रोतों तथा इनके निर्माण में आने वाली कठिनाईयों या बाधाओं का वर्णन कीजिए। **(K.U.K. 2011)**

अथवा

परिकल्पना किसे कहते हैं? इसके मुख्य प्रकारों, स्रोतों तथा इनके निर्माण में आने वाली कठिनाईयों का उल्लेख कीजिए।

अथवा

उपकल्पना का अर्थ, विशेषताओं, स्रोतों तथा प्रकारों का वर्णन कीजिए।
(Describe the meaning, characteristics, Sources and Types of Hypothesis.) **(M.D.U. 2011)**

अथवा

एक अच्छी प्राक्कल्पना की संकल्पना तथा उसके अभिलक्षणों की व्याख्या कीजिए। विभिन्न प्रकार की प्राक्कल्पनाओं का एक उदाहरण दीजिए। **(K.U.K. 2010)**

उत्तर– गुडे और हाट की परिभाषा–गुडे और हाट ने वैज्ञानिक उपकल्पना की एक संक्षिप्त परिभाषा प्रस्तुत की है। उनके शब्दों में **"परिकल्पना एक मान्यता है जिसकी सत्यता सिद्ध करने के लिये उसका परीक्षण किया जा सकता है।"** प्रस्तुत कथन में

स्पष्ट होता है कि उपकल्पना एक ऐसी धारणा होती है जिसकी सत्यता केवल सम्भावित होती है तथा उसका परीक्षण करना बाकी रहता है।

यंग की परिभाषा—श्रीमती यंग ने उपकल्पना की परिभाषा इन शब्दों में व्यक्त की है, **"एक कार्यवाहक विचार जो उपयोगी खोज का आधार बनता है, कार्यवाहक उपकल्पना माना जाता है।"**

परिकल्पना के प्रकार
[Types of Hypothesis]

परिकल्पनाएं सामान्य रूप से **निम्नलिखित** प्रकार की होती है—

1. व्याख्यात्मक या वर्णनात्मक प्राकल्पनाएं (Explanatory or Descriptive Hypothesis)—उपकल्पना अपने आधार के अनुसार तीन रूपों में पाई जाती हैं— (i) कर्ता से संबंधित, (ii) सामग्री से संबंधित, (iii) कर्ता के कार्य करने के नियम से संबंधित। कर्ता और सामग्री के योग को कारण कहा जाता है। इसीलिए यह निष्कर्ष निकलता है कि परिकल्पना दो प्रकार की होती है : कारण से संबंधित उपकल्पना और नियम के विषय में उपकल्पना। कारण (Cause) से संबंधित उपकल्पना को व्याख्यात्मक कहते हैं और नियम से संबंधित परिकल्पना को वर्णात्मक परिकल्पना कहते हैं। व्याख्यात्मक उपकल्पना यह बताती है कि कोई घटना किस कारण होती है तथा वर्णनात्मक परिकल्पना से घटना के घटित होने की रीति का ज्ञान होता है। इतना सब होते हुए भी दोनों प्रकार की उपकल्पनाओं में कोई खास अंतर नहीं माना जाता है। उक्त वर्णात्मक उपकल्पना भी कारण के नियम को व्यक्त करके घटना की व्याख्या करती है, क्योंकि यह उपकल्पना यह बताती है कि घटना क्यों घटित होती है। यह सत्य है कि समस्त प्रकार की उपकल्पनाएं कम सीमा तक व्याख्यात्मक होती हैं। परिकल्पना का कार्य ही व्याख्या प्रस्तुत करना होता है।

2. कामचलाऊ परिकल्पना (Tentative Hypothesis)—कुछ परिकल्पनाएं ऐसी होती हैं कि जिनकी भविष्य कथन की क्षमता बहुत ही कम होती है। प्रकृति में कुछ घटनाएं ऐसी होती हैं जिनकी व्याख्या करने के लिए सक्षम परिकल्पना का होना संभव नहीं होता, परंतु उसका निर्माण आवश्यक हो जाता है। ऐसी परिकल्पना को काम-चलाऊ परिकल्पना कहते हैं। इसी को कुछ समय के लिए सत्य मानकर घटनाओं की व्याख्या प्रस्तुत की जाती है। इस काम-चलाऊ उपकल्पना को अस्थायी उपकल्पना भी कहते हैं। जब भी अधिक उपयुक्त उपकल्पना प्राप्त हो जाती है तो काम-चलाऊ उपकल्पना को छोड़ दिया जाता है।

3. प्रतिनिधित्मक परिकल्पनाएं (Representative Hypothesis)—प्रतिनिधात्मक परिकल्पनाएं चिह्नों की सूक्ष्म रचना और उनकी क्रिया विधि के विषय में होती है। इन परिकल्पनाओं को अप्रत्यक्ष उपायों या विधियों के द्वारा सिद्ध नहीं किया जा सकता है। इनका एक मात्र गुण यह है कि ये विभिन्न तथ्यों के वर्णन के लिए उपयुक्त होती हैं। ये प्रतिरूपक कल्पनाएं कही जाती है। प्रतिरूपक कल्पना का उदाहरण ईश्वर की उपकल्पना से है। ईश्वर को प्रत्यक्षतः ज्ञान करना संभव नहीं है, परन्तु इसकी धारणा के आधार पर अनेक प्राकृतिक घटनाओं की व्याख्या की जाती है।

डी एन.एच. गोपाल ने अपनी पुस्तक में परिकल्पनाओं को निम्न दो भागों में विभाजित किया है।
(An Introduction to Research procedure in Social Science)

1. अशुद्ध मिली-जुली एवं मौलिक परिकल्पनाएं (Impure Implied and Crude Hypothesis)—मौलिक परिकल्पनाएं निम्न स्तरीय विचारधाएं होती हैं। ये सामान्यतः केवल संकलन की जाने वाली सामग्री बनाती हैं। इनमें किसी सिद्धान्त एवं नियम की स्थापना नहीं होती है और ये विशेषकर वर्णनात्मक अध्ययनों से स्थापित होती है।

2. विशुद्ध परिकल्पनाएं (Refined Hypothesis)—ये उपकल्पना अधिक महत्त्वपूर्ण होती हैं। ये अध्ययन के अंतर्गत निकाले गए विभिन्न निष्कर्षों पर आधारित होती हैं। इनके तीन भाग हैं : (i) सामान्य स्तरीय, (ii) जटिल आदर्श, (iii) जटिलतम अन्तःसंबंधित परिकल्पनाएं।

गुडे एवं हाट ने अपनी पुस्तक Methods of Social Research में परिकल्पनाओं को निम्न तीन भागों में विभाजित किया है—

1. परीक्षात्मक एकरूपता दिखाने वाली उपकल्पना (Hypothesis Related to Uniformities)—इस प्रकार की उपकल्पनाओं में वे आती हैं जिनका सीधा संबंध सामूहिक जीवन में प्रचलित किसी मान्यता या विचार धारा से होता है। इस प्रकार की उपकल्पनाओं की जाँच के लिए समूह में विद्यमान तथा संबंधित तथ्यों की जाँच की जाती है। उदाहरण के लिए अन्तर्जातीय एवं अन्तर्विवाह के बारे में अध्ययन, किसी भी कालेज के छात्रों की जातीय पृष्ठभूमि का अध्ययन आदि।

2. आदर्श रूप से संबंधित परिकल्पनाएं (Hypothesis Related to Complex Ideal Types)–इस प्रकार की परिकल्पनाओं में वे आती हैं जिनका निर्माण विभिन्न तर्कों में, कारकों में अंतःसंबंध स्थापित करने के लिए किया जाता है। इसमें तथ्यों को एकत्रित करने एवं उनके तर्कपूर्ण क्रम को आदर्श मानकर सामान्यीकरण किया जाता है। इसके बाद उसी के आधार पर उन तथ्यों एवं घटनाओं की जाँच करने तथा उक्त आधार को सार्थक करने का प्रयास किया जाता है। **ई.डब्ल्यू. बर्गेस (E.W. Burgress)** ने इस प्रकार की परिकल्पनाओं का प्रयोग नगरीय समाजशास्त्र में शहरों के जीवन की व्याख्याओं के संबंध में किया था।

3. विवेचनात्मक परिवर्तनशीलताओं के संबंध में बनाने वाली परिकल्पनाएं (Hypothesis Related to Analytical Variables)–कुछ विशिष्ट परिस्थितियों में इस प्रकार की वैज्ञानिक परिकल्पना का निर्माण किया जाता है। सामाजिक घटना एवं तथ्य अनेक कारकों का परिणाम होती हैं। इनसे सम्बन्धित प्रत्येक कारक एक अलग परिकल्पना का रूप धारण कर सकता है। जब परिवर्तन के लिए उत्तरदायी कारण का न केवल तर्कपूर्ण विश्लेषण ही किया जाता है बल्कि उनका पारस्परिक अंतर्सम्बन्ध भी ज्ञात करना हो तो इस तरह की परिकल्पना बहुत ही उपयोगी होती हैं। उदाहरण के लिए तलाक के अनेक कारण है जैसे–अन्तर्जातीय विवाह, प्रेम विवाह, गरीबी, अनैतिक यौन संबंध आदि। अगर किसी ऐसी परिकल्पना निर्माण किया जाए जो कि विभिन्न कारकों के अन्तर्सम्बन्ध को ध्यान में रखकर बनाई गई हो तो वह परिकल्पना उपर्युक्त प्रकार की होगी।

परिकल्पनाओं या प्राक्कल्पनाओं के स्रोत (Sources of Hypothesis)

परिकल्पना या प्राक्कल्पना के अनुसंधानकर्ता के विचारों का फल है इसलिए यह कहा जा सकता है कि प्राक्कल्पना का स्रोत खुद अनुसंधानकर्ता होता है परन्तु कुछ समाजशास्त्रियों का कहना है कि प्राक्कल्पना को स्रोतों में अनुसंधानकर्ता के अध्ययन को प्रभावित करने वाली सामग्री व उसके सांस्कृतिक और सामाजिक पर्यावरण को सम्मिलित किया जाना चाहिए।

सर्व श्री गुडे व हाट (Goode & Hatt) ने अपनी कृति Methods in Social Research में उपकल्पनाओं के चार मुख्य स्रोत बताये है जो **निम्नलिखित हैं**–

(1) वैज्ञानिक विचारधाराएं (Scientific thoughts)
(2) सामान्य संस्कृतिक तत्त्व (General Cultural Element)
(3) सादृश्य/उपमा (Analogy)
(4) व्यक्तिगत अनुभव (Personal Experience)

(1) **वैज्ञानिक विचारधाराएं (Scientific thoughts)–गुडे व हाट (Goode & Hatt)** का कहना है कि वैज्ञानिक सिद्धांतों और विचारधाराओं के आधार पर ही अनुसंधानकर्ता व वैज्ञानिक अपनी उपकल्पनाओं का निर्माण करता है। जिस प्रकार एक वैज्ञानिक सिद्धांतों के आधार पर सत्य की खोज करता है उसी प्रकार एक अनुसंधानकर्ता भी सिद्धांतों को आधार मानकर विभिन्न सामाजिक समस्याओं का अध्ययन करता है यदि सिद्धांत में यह वर्णन किया गया है कि **"परिवारिक विघटन के कारण बच्चे बाल अपराधी बनते हैं"** तो इसी सिद्धांत के आधार पर अनुसंधानकर्ता कह सकता है कि यदि किसी राज्य में परिवारिक विघटन बढ़ेगा तो उस राज्य में बाल अपराधी भी बढ़ेंगे। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि सिद्धांत ही उपकल्पना को जन्म देते हैं।

(2) **सामान्य संस्कृतिक तत्त्व (General Cultural Element)**–परम्पराएं, लोकविश्वास, प्रथाएं, लोकरीतियाँ हमारी उपकल्पना के मुख्य सांस्कृतिक स्रोत हैं यदि हमारे समाज पर भौतिक संस्कृति का बोल बाला है तो हमारी उपकल्पना में भी इसका प्रभाव स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होता है। यदि हमारी संस्कृति अध्यात्मिकवाद से प्रभावित है तो हमारी उपकल्पना में भी अध्यात्मिकवाद का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देगा। सामान्य सांस्कृतिक तत्त्वों के प्रभाव के कारण ही पाश्चात्य जगत के अनुसंधानकर्ताओं की उपकल्पनाओं में भौतिकवाद और भारतीय अनुसंधाकर्ताओं की उपकल्पनाओं में अध्यात्मिकवाद का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है

(3) **सादृश्य या उपमा (Anology)**–'उल्फ' के शब्दों में–**"उपमा प्राक्कल्पनाओं के निर्माण तथा घटना में किसी काम चलाऊ नियम की खोज में अत्यन्त उपयोगी पथ प्रदर्शक है"** कभी-कभी दो तथ्यों के बीच की समानता के कारण नई प्राक्कल्पनाओं का जन्म होता है जब हम वस्तुओं की प्रकृति देखकर उसी प्रकृति को अन्य वस्तुओं व प्राणियों पर लागू करते हैं तो हम उसे उपमा या सादृश्य कहते हैं। इसे एक उदाहरण से समझा जा सकता है। समाज की 'इकोलाजिकल थियरी' का मूल आधार वनस्पतिशास्त्र है। इसमें यह बात देखी गयी है कि बहुत से पौधे एक ही विशेष स्थान पर उगते हैं इसलिए इस आधार पर कल्पना की गयी कि मानव समाज में भी इस प्रकार को भौगोलिक केन्द्रीयकरण के लक्षण पाये जाते हैं।

4) **व्यक्तिगत अनुभव (Personal Experience)**—हर व्यक्ति के व्यक्तिगत अनुभव भी प्राक्कल्पना के निर्माण में सहायक प्रायः तथ्य तो रहते ही हैं परन्तु उन्हें एक विशेष दृष्टिकोण से ही देखकर वैज्ञानिक या अनुसंधानकर्ता नयी प्राक्कल्पना को ता है। उदाहरण के लिए न्यूटन से पहले पेड़ से सेब गिरना किसने नहीं देखा था, परन्तु उसके आधार पर गुरुत्वाकर्षण की केवल उसी का काम था।

ना के निर्माण में कठिनाइयां
lems in Formulation of Hypothesis)

परिकल्पनाओं के निर्माण में निम्नलिखित कठिनाइयों के सामना करना पड़ता हैं—

1) **सामाजिक घटनाओं की प्रकृति से संबंधित कठिनाई (Problem Related to the Nature of Social nena)**—सामाजिक घटनाओं की प्रकृति अधिकतर जटिल होती है। इसीलिए इनके बारे में भविष्यवाणी करना अत्यंत कठिन है।

2) **सामाजिक परिवर्तन के कारण समस्या (Problem due to Social Change)**—सामाजिक जीवन स्थिर न होकर होता है अर्थात् समाज में सामाजिक परिवर्तन होते रहते हैं। परिवर्तन के बाद किसी भी सामाजिक घटना के बारे में पूर्वानुमान सिद्ध हो जाता है।

3) **सांस्कृतिक एकीकरण (Cultural Integration)**—प्रत्येक समाज की संस्कृति भिन्न-भिन्न होती है। अनुसंधानकर्ता विशेषताओं को ध्यान में रखकर परिकल्पना का निर्माण करता है। संचार तथा यातायात की सुविधा के कारण एक समाज के सम्पर्क में आता रहता है और उनकी संस्कृति प्रभावित होती जाती है। इस सांस्कृतिक अस्थिरता के कारण परिकल्पनाओं में कठिनाइयां पैदा होती हैं।

4) **तत्कालीन सिद्धान्त (Present Theories)**—कई प्रकार की उपकल्पनाओं के निर्माण प्रचलित सिद्धान्तों के आधार पर हैं, लेकिन सिद्धान्तों की व्यावहारिकता का ज्ञान न होने के कारण कभी-कभी परिकल्पनाओं को छोड़ना पड़ता है।

5) **अनुसंधानकर्ता में कुशलता का अभाव (Lack of Skills in Researcher)**—व्यावहारिक परिकल्पनाओं के निर्माण में बड़ी कठिनाई है कि कई बार हर तरह की सुविधाएं उपलब्ध होने पर भी अनुसंधानकर्ता की अकुशलता के कारण वह परिकल्पना का निर्माण नहीं कर सकता है। व्यावहारिक एवं शुद्ध परिकल्पना के निर्माण में तो अनुसंधानकर्ता की कुशलता आवश्यक है।

6) **नई अनुसंधान प्रणालियों का ज्ञान न होना (No Knowledge of New Research Technique)**—आज के अनुसंधानकर्ता को नई प्रणालियों का ज्ञान नाममात्र का ही है। इसके कारण न तो वे अपनी पुरानी परिकल्पनाओं के नियम हैं और न ही उसकी नई के प्रति आस्था है। ऐसी स्थिति में उन्हें परिकल्पना के निर्माण तथा उसकी उपयोगिता में कठिनाई

7) **पक्षपात की भावना (Feeling of Biasedness)**—सामाजिक अनुसंधानकर्ता स्वयं एक समाज एवं समुदाय का सदस्य अपनी संस्कृति तथा समुदाय के प्रति उसकी निष्ठा स्वाभाविक ही होती है। यह निष्ठा किसी सामाजिक विषय में बारे एवं निष्पक्ष परिकल्पना के निर्माण में बाधक बनती है।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि परिकल्पना एक ऐसी अनुसंधान योजना है जिसके अंतर्गत अनुसंधान संबंधी सभी कार्य ढंग से किए जाते हैं। लेकिन इसकी सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि परिकल्पना कितनी सरल और समस्या से है तथा ये तथ्यों को एकत्रित करने में तथा उनकी जाँच करने में कितनी व्यावहारिक है। ❑

प्रश्न 4. संक्षिप्त टिप्पणी अथवा नोट लिखें : परिकल्पना के आवश्यक चरण या सोपान।

उत्तर– परिकल्पना की विभिन्न परिभाषाओं से उसके निम्नलिखित चरण या सोपान ज्ञात होते हैं—

1) **निरीक्षण (Observation)**—परिकल्पना की अच्छाई उसके निरीक्षण पर आधारित है। परिकल्पना की सत्यता उतना ही प्रमाणिक होगी जितने अच्छे ढ़ंग से उसका निरीक्षण किया गया होगा। इसी कारण प्रसिद्ध वैज्ञानिक अपनी उपलब्धता से संतुष्ट होता जब वह बार-बार उस पर अनुसंधान कर लेता है।

(2) **परिकल्पना-निर्माण (Formation of Hypothesis)**—बार-बार काफी समय तक पर्यवेक्षण और सूक्ष्म निरीक्षण के बाद परिकल्पना का निर्माण किया जाता है। इसमें कल्पना शक्ति की विशेष आवश्यकता होती है। कल्पना की सहायता से ज्ञान के आधार पर अज्ञात का अनुमान किया जाता है। वैज्ञानिक या अनुसंधानकर्ता की किसी समस्या के बिना अन्तर्दृष्टि होती एवं उसी से सम्बन्धित और सत्य परिकल्पना की निर्मिति करना।

(3) **निगमन (Deduction)**—इसमें अंतर्गत परिष्कृत सामान्य विधि से की हुई उपकल्पना से निष्कर्ष प्राप्त किए जाते हैं और निकाले गए निष्कर्षों की वास्तविक तथ्यों से तुलना की जाती है। यदि तथ्यों के द्वारा उसके निष्कर्षों की पुष्टि होती है तो उपकल्पना सत्यापित हो जाती है नहीं तो अप्रमाणित हो जाती है। दोनों दशाओं में उपकल्पना में दिए गए कारण का प्रायोगिक संभव नहीं होता और केवल निष्कर्ष का ही प्रायोगिकरण होता है।

(4) **सत्यापन (Verification)**—परिकल्पना का सत्यापन प्रत्यक्ष और परोक्ष दोनों प्रकार से होता है। प्रत्यक्ष सत्यापन निरीक्षण और प्रयोग के द्वारा होता है और परोक्ष सत्यापन उपकल्पना से निष्कर्ष प्राप्त कर वास्तविक तथ्यों के साथ तुलना करके प्राप्त होता है। परोक्ष सत्यापन निगमन द्वारा और संगत तथ्यों के संचय द्वारा किया जाता है।

प्रश्न 5. परिकल्पना का सत्यापन कैसे किया जाता है? संक्षेप में स्पष्ट कीजिए।

अथवा

परिकल्पना के सत्यापन की विधियों को संक्षेप में बताएं।

उत्तर-एक परिकल्पना हमेशा वास्तविक घटनाओं पर आधारित होना चाहिए। यद्यपि यह एक पूर्वानुमान कथन होता है लेकिन जब हम किसी परिकल्पना के पक्ष में प्रमाण इकट्ठे करते हैं तब वह परिकल्पना और दृढ़ हो जाती है। इस तरह से किसी परिकल्पना की पुष्टि के लिए की गई कार्यवाही सत्यापन कहलाती है। तथ्य संकलन का अर्थ प्रकृति की घटनाओं में से निरीक्षण का प्रयोग द्वारा ऐसे तथ्यों को इकट्ठा करना है जो परिकल्पना के अनुकूल हों। इसके अन्तर्गत जाँच-पड़ताल दो तरह से की जाती है।

(A) **प्रत्यक्ष पड़ताल (Direct Verification)**—किसी भी परिकल्पना के तथ्य क्या उसके अनुकूल हैं? इसका पता लगाना चाहिए। इस विधि की मुख्य विशेषता यह है कि इसमें प्राप्त किए गए सत्यापन की जाँच नहीं की जा सकती है। प्रयोग द्वारा भिन्न-भिन्न परिकल्पनाओं की अलग-अलग जाँच की जाती है। उदाहरण के लिए मेमनों के पैरों की लम्बाई तथा स्नायु अत्यधिक संवेदनशील होते हैं जिससे वे हवा के दबाव के आगे निकट की वस्तुओं का पता लगा लेते हैं। इस तथ्य के सत्यापन के लिए प्रयोग किया गया। इसमें अंतर्गत नेत्र युक्त व्यक्तियों की आँखों पर पट्टी बाँध दी गई। उन्होंने आवाज द्वारा स्थान निर्धारित किया, अतः इसमें सत्यापन के लिए प्रयोग आवश्यक है।

(B) **अप्रत्यक्ष पड़ताल (Indirect Verification)**—जब किसी घटना का निरीक्षण नहीं किया जा सकता है तो वहाँ अप्रत्यक्ष सत्यापन का सहारा लेना पड़ता है। जैसे परमाणु का निरीक्षण संभव नहीं है। जैसे—न्यूटन के गुरुत्वाकर्षण के नियम के अनुसार पृथ्वी के दबाव से, हवा के नल से 36 फुट ऊँचे उठाकर चाहिए अब अगर पड़ताल करने पर जल का स्तर ठीक निकलता है तो अप्रत्यक्ष रूप से न्यूटन के नियम की पुष्टि हो जाती है।

यह निम्न प्रकार से होता है :

(1) **निगमन द्वारा (Through Deduction)**—कुछ प्राकृतिक घटनाओं में निगमन द्वारा भी निष्कर्ष नहीं निकाले जा सकते हैं। संगत तथ्यों के द्वारा सीधुई कल्पना का सत्यापन किया जाता है।

(2) **संगत तथ्यों के संचय द्वारा (Through Collection of Relevant Facts)**—कुछ प्राकृतिक घटनाओं का निगमन द्वारा निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता। संगत तथ्यों के संचय द्वारा ही हुई कल्पना का सत्यापन किया जाता है।

(3) **घटनाओं की व्याख्या पर्याप्त होना (Explanation of Phenomena should be Adequate)**—हुई कल्पना के लिए यह आवश्यक है कि जिन घटनाओं की व्याख्या के लिए निर्माण किया है। उसका पर्याप्त होना जरूरी है। किसी परिकल्पना की व्याख्या के लिए निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए-

(i) पर्याप्त समय तक जाँच (Survey up to Adequate Time)

(ii) केवल उन्हीं तथ्यों की व्याख्या करना जिनके लिए वह बनी है।

(iii) स्पष्टीकरण के आवश्यक अंशों की जाँच।

प्रश्न 6. परिकल्पना की प्रमाणिकता से सम्बन्धित मुख्य कसौटियों को संक्षेप में स्पष्ट कीजिए।

अथवा

परिकल्पना की प्रमाणिकता का परीक्षण किस प्रकार किया जा सकता है? स्पष्ट कीजिए।

अथवा

परिकल्पना की प्रमाणिकता के परीक्षण पर संक्षिप्त टिप्पणी अथवा नोट लिखें।

उत्तर–परिकल्पना एक अस्थायी अनुमान है, किन्तु प्रत्येक अनुमान को वैध परिकल्पना नहीं माना जा सकता। **निम्नलिखित** [illegible] पर खरी उतरने वाली प्राक्कलपना ही प्रामाणिक मानी जाती है :

1. **विरोधाभास का अभाव (Absence of Self Contradition)**–परिकल्पना में ऐसा विरोधाभास नहीं होना चाहिए जो [illegible]ना को ही नकार रहा हो। ऐसा होने पर उसकी प्रामाणिकता का प्रश्न ही नहीं उठता। परिकल्पना आत्म संगति से परिपूर्ण [illegible] चाहिए। कुछ उपकल्पनाएं अपवादस्वरूप बाद में सत्य साबित हुई हैं। यद्यपि आरंभ में ये हास्यास्पद लगती थीं। इसलिए सदैव [illegible]चना भी अनुचित होगा कि प्रत्येक ऐसी परिकल्पना जो प्रारंभ में आत्मविरोधी हैं। अवश्य ही सारहीन और असत्य होगीं। इसका [illegible] सोच-विचार कर ही करना चाहिए।

2. **स्थापित सत्यों के विरुद्ध न होना (Not opposed to Established Truths)**–यह आवश्यक है कि उपकल्पना ज्ञात [illegible] के अनुसार हो और स्थापित सत्यों के विरुद्ध न हो। यदि घटना की विशेष परिस्थितियों के कारण ज्ञात तथ्यों के विरुद्ध [illegible]ना का निर्माण करना पड़ता है तो उसे अब तक संदिग्ध ही मानना चाहिए जब तक उसकी प्रामाणिकता सिद्ध न हो जाए।

3. **निश्चितता और स्पष्टता (Definiteness and Clarity)**–यह आवश्यक है कि प्रामाणिक परिकल्पना निश्चित और स्पष्ट [illegible] अनिश्चित और अस्पष्ट परिकल्पना प्रामाणिक नहीं हो सकती। परिकल्पना में प्रयुक्त शब्दों के अर्थ भली प्रकार स्पष्ट और [illegible] होने चाहिएं अन्यथा परिकल्पना के आधार पर अनुसंधान कार्य संभव नहीं हो सकता।

4. **तथ्यों पर आधारित (Based on Data)**–कर्ता या कारण से संबंधित प्रामाणिक परिकल्पना को तथ्यों पर आधारित [illegible] कारण होना चाहिए। ऐसी परिकल्पना के निर्माण के लिए निष्पक्ष रूप से तथ्यों का निरीक्षण करना चाहिए और फिर उनकी [illegible] के लिए परिकल्पना बनानी चाहिए। यह आवश्यक नहीं है कि वास्तविक कारण का प्रत्यक्षीकरण किया ही जाए, क्योंकि कुछ [illegible] में वास्तविक कारण का प्रत्यक्षीकरण संभव नहीं होता।

5. **सत्यापनीय (Verifiable)**–उप-कल्पना को सत्यापन के योग्य होना चाहिए। **कार्बेथ रीड** के मत में, **"किसी वाक्य के [illegible]ना होने के लिए केवल दो ही प्रतिबंध हैं। उसे सत्यापनीय होना चाहिए और इसके लिए उसे निश्चित होना चाहिए।"** इन [illegible]बंधों से ही परिकल्पना का युक्ति संगत निर्माण संभव हो जाता है। विज्ञान के क्षेत्र में उन्हीं परिकल्पनाओं को प्रामाणिक माना [illegible] है जो सत्यापित की जा सकती हैं। इसके अभाव में वह अवैज्ञानिक और अप्रामाणिक हो जाती है।

लघूत्तरात्मक प्रश्न
(Short Answer Type Questions)

प्रश्न 1. उपकल्पना किसे कहते हैं? उपयुक्त परिभाषाओं सहित समझाइए।

अथवा

उपकल्पना का क्या अर्थ है? परिभाषाएं देकर बताएं।

उत्तर–**उपकल्पना का अर्थ (Meaning of Hypothesis)**–किसी भी समस्या का अध्ययन करने के लिये अथवा किसी [illegible] सामग्री का अध्ययन करने के लिए यह जरूरी है कि अध्ययनकर्ता को उसके सम्बन्ध पूर्वज्ञान या पूर्वकल्पना हो। इस पूर्वज्ञान [illegible]ना को **ही हम** समाजशास्त्र में हम उपकल्पना या प्राक्कल्पना कहते हैं।

[illegible]ाएँ
[illegible]efinitions)

1. **लुण्डबर्ग (Lundberg)** के अनुसार, **"उपकल्पना एक निश्चित निष्कर्ष है जिसकी सत्यता की परीक्षा अभी बाकी है बिल्कुल प्रारम्भिक स्तर पर यह केवल एक अनुमान, विचार या कल्पना हो सकती है जिसके आधार पर हम आगे क्रियात्मक**

सम्बन्ध को प्रदर्शित करता है जिसकी परख प्रदत्तों के आधार पर की जा चुकी है। तृतीय स्तर पर उपकल्पना की परख से नये अधिनियम का प्रतिपादन किया जाता है। अधिनियम के अन्तर्गत अमूर्त प्रत्यय को प्रस्तुत किया जाता है। इसे ज्ञान का उच्च स्तर माना जाता है।

प्रश्न 8. परिकल्पना के मुख्य कार्य या महत्त्व कौन-कौन से हैं? स्पष्ट कीजिए।

अथवा

परिकल्पना से सम्बन्धित मुख्य कार्यों के महत्त्व को संक्षेप में बताएं।

उत्तर– बरदल एवं घिसौली ने परिकल्पना के निम्नलिखित कार्य या महत्त्व बताये हैं–

(i) यह एक व्याख्या के रूप में समस्याओं का समाधान करती है।
(ii) यह अनुसंधान का प्रेरक होती है।
(iii) यह पद्धति के विकास में सहायता करती है।
(iv) यह प्रौद्योगिकी विधियों के मूल्यांकन की कसौटी के रूप में होती हैं।
(v) यह एक संगठनात्मक शक्ति के रूप में कार्य करती है।
(vi) यह समस्या के क्षेत्र को सीमाबद्ध करती है इससे तर्क शक्ति व आंकड़ों के संग्रह में सहायता प्राप्त होती है।
(vii) चरों में विशिष्ट सम्बन्धों की जानकारी प्राप्त होती है।
(viii) सिद्धान्तों की रचना में यह सहायक होती है।
(ix) वैज्ञानिक निष्कर्षों एवं तथ्यों की जानकारी मिलती है।

वान डालेन ने परिकल्पना के निम्नलिखित कार्य बताए हैं–

(i) परिकल्पना द्वारा वैज्ञानिक शोध कार्य किया जा सकता है। यह समस्या का समाधान प्रस्तुत करती है।
(ii) यह समस्या का सीमांकन करती है। शोधकर्ता समस्या के तथ्यात्मक एवं सम्प्रत्यात्मक तत्त्वों को गहन रूप में समझ सकता है।
(iii) यह शोधकर्ता को निर्देशन देती है एवं कार्य की रूपरेखा प्रस्तुत करती है।
(iv) परिकल्पना तथ्यों की सार्थकता का निर्धारण करती है एवं शोधकर्ता को रचनात्मक कार्यों के लिए प्रोत्साहित करती है।
(v) परिकल्पना शोधकार्य की दिशा, प्रदत्तों के संकलन में सहायता एवं उपकरण, परीक्षण एवं प्रविधियों के प्रयोग में सहायक होती है।
(vi) परिकल्पना निष्कर्षों को आधार प्रदान करती है।
(vii) शोध परिकल्पनाओं से नये अनुसंधान को प्रोत्साहन मिलता है।

❐

2.5 प्रतिदर्श : अवधारणा, आवश्यकता, सोपान, प्रकार तथा विशेषताएँ (Sampling : Concept, Need, Steps, Types and Characteristics of Sampling)

प्रश्न 1. समष्टि या जनसंख्या के अर्थ को स्पष्ट करते हुए इसके मुख्य प्रकारों का उल्लेख करें।

अथवा

समष्टि या जनसंख्या का क्या अर्थ है? इसके प्रमुख प्रकारों का वर्णन कीजिए।

अथवा

पोपुलेशनल की अवधारणा स्पष्ट कीजिए।
(Explain the concept of population.) **(M.D.U. 2009)**

उत्तर–समष्टि या जनसंख्या का अर्थ (Meaning of Population)–समष्टि या जनसंख्या (Population) शब्द प्रयोग के क्षेत्र में अत्यन्त ही प्रचलित संप्रत्यय है। इसका प्रयोग अनुसंधान (Concept) है। इसका प्रयोग अनुसंधान (Research) क्षेत्र में भी लोकप्रिय है। लेकिन प्रयोग या अनुसंधान के संदर्भ में इसकी व्याख्या अलग ढंग से की जानी चाहिए।

(b) अपरिमित समष्टि (Infinite Population)—इस प्रकार की समष्टि का आकार अनिश्चित होता है अर्थात् इस समष्टि (Populations) की इकाइयों (Units) की गिनती करना संभव नहीं होता। उदाहरणार्थ—धरती पर उगे पेड़-पौधे, किसी पेड़ पर उगे पत्ते, आकाश के सितारे आदि।

किसी देश की समष्टि (Population) को परिमित (Finite) की श्रेणी में शामिल किया जाता है क्योंकि किसी भी देश की जनसंख्या को गिनना संभव है। लेकिन फिर भी किसी भी देश की जनसंख्या को अपरिमित (Inifinite) माना जाता है क्योंकि परिकल्पना (Hypothesis) के रूप में इस आबादी में वृद्धि होती रहती है।

(c) वास्तविक समष्टि (Real Population)—समष्टि या जनसंख्या वास्तविक (Real) हो सकती है। इसमें इसकी इकाईयां (Units) अपना वास्तविक अस्तित्व (Existence) रखती हैं।

(d) काल्पनिक समष्टि (Imagined Population)—इस प्रकार की समष्टि (Population) में इकाइयां (Units) अपना वास्तविक अस्तित्व नहीं रखती। इनका अस्तित्व केवल कल्पना (Imagination) में ही होता है। मनोविज्ञान और शिक्षा के क्षेत्र में कई बार काल्पनिक समष्टि (Imagined Population) का ही प्रयोग होता है।

(e) प्राकृतिक ढंग से विभेदनीय समष्टि (Naturally Distinguishable Population)—इस प्रकार की समष्टि (Population) के सदस्यों या इकाइयों को प्राकृतिक ढंग से विभेदीकृत किया जा सकता है, जैसे—पुरुष, महिला, बच्चे, पशु, विभिन्न पेड़ आदि।

(f) प्राकृतिक ढंग से अविभेदीय समष्टि (Naturally Undistinguishable Population)—इस प्रकार की समष्टि में इकाइयों या सदस्यों की प्राकृतिक ढंग से विभेदीकरण संभव नहीं होता, जैसे—मिट्टी, द्रव्य पदार्थ, मानव व्यवहार आदि। मानव व्यवहार को शब्दों में ही परिभाषित किया जा सकता है।

समष्टि या जनसंख्या

1. → परिमित समष्टि
2. → अपरिमित समष्टि
3. → वास्तविक समष्टि
4. → काल्पनिक समष्टि
5. → प्राकृतिक ढंग से विभेदीय
6. → प्राकृतिक ढंग से अविभेदीय

(चित्र : समष्टि या जनसंख्या के प्रकार)

❐

प्रश्न 2. प्रतिदर्श से आपका क्या अभिप्राय है? प्रतिदर्श के मुख्य प्रकारों की विवेचना कीजिए।

अथवा

सम्भाव्य तथा असम्भाव्य के अर्थ को स्पष्ट करते हुए इनके मुख्य प्रकारों की संक्षिप्त विवेचना कीजिए।

अथवा

प्रतिदर्श या निदर्श का क्या अर्थ है? सम्भाव्य तथा असम्भाव्य प्रतिदर्श के गुणों एवं दोषों को बताते हुए इनके प्रमुख प्रकारों का वर्णन कीजिए।

अथवा

प्रतिचयन की परिभाषा दीजिए। प्रतिचयन की उपयोगिता क्या है?

(Define sampling. What is utility of sampling.) **(M.D.U. 2010)**

उत्तर–प्रतिदर्श या निदर्शन का अर्थ (Meaning of Sampling)—प्रतिदर्श (Sample) जनसंख्या का ही हिस्सा होता है। संख्यात्मक दृष्टि से एक प्रतिदर्श (Sample) एक तत्त्व जितना छोटे आकार का हो सकता है वह जनसंख्या के एक 'तत्व' के रूप में हो सकता है। (A sample is a small proportion of a population selected for analysis)। प्रतिदर्श का अवलोकन

(Observation) करने से जनसंख्या के बारे में कई प्रकार के निष्कर्ष निकाले जाते हैं। प्रतिदर्श (sample) का चयन ऐसे ही नहीं कर लिया जाता, बल्कि इसे सोच-समझकर किया जाता है।

समष्टि या जनसंख्या की सीमाएं विस्तृत होती हैं अर्थात् उसका आकार बड़ा होता है तथा उस सम्पूर्ण जनसंख्या का अध्ययन करना किसी भी अनुसंधानकर्ता के लिए संभव नहीं होता। सम्पूर्ण जनसंख्या के अध्ययन के लिए अधिक समय, धन तथा शक्ति चाहिए जो कि व्यावहारिक रूप से असंभव नहीं तो कठिन अवश्य है। उदारणार्थ–यदि भारत के समस्त किशोरों की अभिवृत्तियों (Attitudes) का पता लगाया जाना है तो भारत के हर किशोर (Adolescent) का परीक्षण करना एक जटिल कार्य हो सकता है। व्यावहारिक दृष्टि से किशोरों को जनसंख्या अपरिमित (Infinite) होने के कारण ऐसा अध्ययन संभव ही है। इस परिस्थिति में अध्ययनकर्ता जनसंख्या या समष्टि (Population) में से कुछ किशोरों (Adolescent) कर चयन कर लेता है जिसे 'प्रतिदर्श' (Sample) का नाम दिया जाता है।

प्रतिदर्श (Sample) में घटनाओं, व्यवहारों, परीक्षणों व अन्य इकाइयों का चयन किया जा सकता है। एक प्रतिदर्श (Sample) के सदस्यों में वे विशेषताएं होनी चाहिए जो कि समष्टि (Population) में होती है। **पी.वी.यंग** (P.V. Young) के अनुसार एक प्रतिदर्श (Sample) में उसकी समष्टि (Population) का एक लघु चित्र (Miniature Picture) होता है। एक प्रतिदर्श (Sample) में उसकी समष्टि (Population) के गुण उसी समानुपात (Proportion) में विद्यमान होने चाहिए। जनसंख्या के मापन को प्राचल (Parameters) कहते हैं तथा प्रतिदर्श (Sample) के मापन को साख्यिकी (Statistics) कहते हैं। उदाहरणार्थ–किसी जनसंख्या का मध्यमान (Mean), मध्यांक (Median) तथा सह-सम्बन्ध (Correlation) आदि को पारामीटर (Parameters) कहा जाता है। सामान्यतः पारामीटर्स का अनुमान साख्यिकी के आधार पर लगाया जाता है। इस प्रकार पारामीटर्स की शुद्धता न्यादर्श या प्रतिदर्श (Sample) प्रतिनिधित्व पर निर्भर करती है।

प्रतिदर्श की आवश्यकता (Need of Sampling)—

1. इससे समय बचता है।
2. इससे धन की भी बचत होती है।
3. इससे प्रशासकीय सुविधाएं संभव हो जाती हैं।
4. सम्पूर्ण जनसंख्या का अध्ययन असंभव होता है लेकिन प्रतिदर्श का अध्ययन संभव होता है।
5. इससे जानकारियां विस्तृत मिलती हैं।

प्रतिदर्श की सीमाएं (Limitations of Sampling)—

1. प्रतिदर्श के कारण पक्षपात की संभावना रहती है।
2. प्रतिदर्श की इकाइयों में अस्थिरता रहती है।
3. प्रतिदर्श का चयन भी त्रुटिपूर्ण हो सकता है।
4. योग्य कर्मचारियों का अभाव रहता है।
5. प्रतिनिधि प्रतिदर्श (Representative Sampling) की समस्या बनी रहती है।

प्रतिदर्श के प्रकार (Types of Samples) – प्रतिदर्शों (Sample) को दो वर्गों में बांटा जा सकता है।

(A) सम्भाव्य प्रतिदर्श (Probability Sample)

(B) असम्भाव्य प्रतिदर्श (Non-Probability Sample)

(A) सम्भाव्य प्रतिदर्श (Probability Sample)–सम्भाव्य प्रतिदर्श से अभिप्राय है वे प्रतिदर्श जिनमें जनसंख्या (Population) के प्रतिनिधित्व की सम्भावना होती है।

जी.सी.हेलमेस्टर (G.C. Helmaster) "सम्भाव्य प्रतिदर्श से अभिप्राय है वे प्रतिदर्श जिनमें जनसंख्या (Population) के प्रतिनिधित्व की सम्भावना होती है। इसमें एक सदस्य का दूसरे सदस्य पर कोई भी बन्धन नहीं होता है तथा प्रत्येक सदस्य पूर्ण रूप से स्वतंत्र होता है।"

सम्भाव्य प्रतिदर्श की विशेषताएं (Characteristics of Probability Samples)–

(i) इसमें जनसंख्या के प्रत्येक सदस्य का चयन किये जाने की संभावना होती है।

(ii) यह प्रतिदर्श जनसंख्या का अच्छा प्रतिनिधित्व करता है।

(iii) इस प्रतिदर्श के आधार पर सामान्यीकरण किया जा सकता है।

(iv) सम्भाव्य प्रतिदर्श से एकत्रित किये गये अंकों का वितरण सामान्य (Normal) होता है। विवरण स्वतंत्र नहीं होता है।

सम्भाव्य प्रतिदर्श की सीमाएं (Limitations of Probability Sample)–

(i) सम्भाव्य प्रतिदर्श में प्रतिनिधित्व की कोई गांरटी नहीं होती। यह प्रतिदर्श जनसंख्या का प्रतिनिधित्व कर भी हो सकता है और नहीं भी।

(ii) सम्भाव्य प्रतिदर्श से प्राप्त अंकों का वितरण पूरी तरह से सामान्य नहीं होता।

(iii) इस प्रकार के प्रतिदर्श पर आधारित सामान्यीकरण में जोखिम रहता है।

(iv) इस प्रकार के प्रतिदर्श का चयन व्यावहारिक (Practicable) नहीं होता।

(B) **असम्भाव्य प्रतिदर्श (Non-Probability Sample)**–प्रतिदर्श के चयन में संभावना का कोई स्थान नहीं होता तो उसे असम्भाव्य प्रतिदर्श (Non-Probability Sample) कहते हैं। इसमें प्रतिदर्श और जनसंख्या एक ही होते हैं। इसमें सामान्यीकरण किया जा सकता तथा इसका प्रयोग स्थानीय अनुसंधान कार्य में ही किया जाता है।

असम्भाव्य प्रतिदर्श की विशेषताएं (Characteristics of Non–Probability Samples)–

(i) इनका चयन सरल तथा सुगम होता है, क्योंकि इनमें जनसंख्या और प्रतिदर्श एक ही होते हैं।

(ii) इसके द्वारा प्राप्त परिणामों में जोखिम (Risk) नहीं होता।

(iii) किसी सदस्य के चयन की संभावना का प्रश्न ही नहीं होता।

(iv) प्राप्तांकों का वितरण स्वतंत्र होता है।

(v) विश्लेषण के लिए सरल सांख्यिकी (Non-Parametrics) का प्रयोग किया जाता है।

असम्भाव्य प्रतिदर्श की सीमाएं (Limitations of Non–Probability Samples)–

(i) इसमें सामान्यीकरण नहीं किया जा सकता।

(ii) विश्लेषण के लिए मानक सांख्यिकीय का प्रयोग नहीं किया जा सकता।

(A) **सम्भाव्य प्रतिदर्श के प्रकार (Types of Probability Sampling)**–सम्भाव्य प्रतिदर्श निम्न प्रकार के होते हैं :

1. साधारण अनियत प्रतिदर्श (Simple Random Sample)
2. क्रमिक प्रतिदर्श (Systematic Sample)
3. वर्गबद्ध प्रतिदर्श (Stratified Sample)
4. बहुस्तरीय प्रतिदर्श (Multi-stage Sample)
5. बहुरूपी प्रतिदर्श (Multiple Sample)
6. समूह प्रतिदर्श (Cluster Sample)

1. **साधारण अनियत प्रतिदर्श (Simple Random Sample) :** इस प्रकार के प्रतिदर्श (Sample) का चयन इस प्रकार से किया जाता है कि जनसंख्या के प्रत्येक तत्त्व को इस प्रतिदर्श (Sample) में शामिल होने का बराबर का अवसर मिले। इस प्रतिदर्श में एक दूसरे व्यक्ति के चयन पर प्रभाव नहीं पड़ता। साधारण अनियत प्रतिदर्श का चयन निम्न विधि से किया जा सकता है :

(a) सिक्का उछालकर (Tossing a Coin)

(b) लॉटरी विधि (Lottery Method)

(c) टिपिट तालिका द्वारा (Tepitt's Table)

2. **क्रमिक प्रतिदर्श (Systematic Sample)**–यह विधि अनियत विधि का ही एक सुधरा हुआ रूप है। इसमें जनसंख्या (Population) की जानकारी आवश्यक होती है। इसमें सभी के नामों की सूची वर्णमाला (Alphabetical) या अन्य विधि द्वारा बनाई जाती है। इस सूची में से एक क्रम से व्यक्ति अथवा इकाई का चयन करते जाते हैं।

उदाहरणार्थ–सूची का हर पांचवाँ या दसवां व्यक्ति।

3. **वर्गबद्ध प्रतिदर्श** यह विधि पहली दोनों विधियों की तुलना में श्रेष्ठ है। इसमें मानदंडों के आधार पर जनसंख्या को वर्गीकृत किया जाता है। उदाहरणार्थ–एक वर्ग में उच्च योग्यता वाले व्यक्ति, दूसरे वर्ग में कम योग्यता वाले व्यक्ति तथा तीसरे वर्ग में निम्नतम

योग्यता वाले व्यक्ति। हर वर्ग से प्रतिदर्श के लिए इकाइयों का चयन किया जाता है। इस प्रकार प्रतिदर्श (Sample) में हर प्रकार की योग्यता वाले व्यक्ति शामिल हो जाएंगे।

4. बहुस्तरीय प्रतिदर्श (Multi-stage Sample)–इसमें जनसंख्या के कई स्तर होते हैं जैसे–प्राथमिक स्तर, माध्यमिक स्तर आदि। उदाहरणार्थ–जैसे हम रोहतक विश्वविद्यालय के बी.एड. के छात्रों का एक प्रतिदर्श (Sample) चुनना चाहते हैं तो उसमें हम कुछ स्नातकोत्तर छात्र (Post Graduate Students) लिये। हमारा चयन करने का प्राथमिक स्तर स्नातकोत्तर डिग्री है। लेकिन इस प्राथमिक स्तर के साथ अन्य स्तर भी सम्बन्धित हैं, जैसे स्नातकोत्तर में एम.ए., एम.एस.सी. तथा एम.कॉम स्तर शामिल हैं। इस प्रकार स्नातकोत्तर छात्रों में लड़के और लड़कियां दोनों ही शामिल हैं। फिर स्नातकोत्तर स्तर में विज्ञान, कला, वाणिज्य आदि स्तर भी शामिल हैं।

प्रयोगकर्ता इन सभी स्तरों पर विचार करके ही एक उपयोगी प्रतिदर्श का चयन करता है। प्रत्येक स्तर की इकाई का उपयोग किया जाता है। जनसंख्या में ये स्तर उपलब्ध होते हैं।

5. बहुरूपी प्रतिदर्श (Multiple Sample)–इस विधि में दो या दो से अधिक प्रतिदर्शों को चुना जाता है। इसलिए बहुरूपी प्रतिदर्श का नाम दिया गया है। *उदाहरणार्थ, मान लो कि हमने कुरुक्षेत्र और रोहतक विश्वविद्यालयों की बी.एड. कक्षा के छात्रों* के ज्ञानोपार्जन में सह-सम्बन्धन मालूम करना है तो एक प्रतिदर्श (Sample) कुरूक्षेत्र विश्वविद्यालय तथा एक प्रतिदर्श रोहतक विश्वविद्यालय की बी.एड. कक्षाओं को चुना जाएगा। दो से अधिक प्रतिदर्शों का भी चयन किया जा सकता है। सभी प्रतिदर्शों का चयन का आधार एक समान होना चाहिए।

6. समूह प्रतिदर्श (Cluster Sample)–जब कोई जनसंख्या बहुत ही विस्तृत होती है तथा दूर-दूर तक फैली होती है तो उनका अध्ययन करना बहुत ही कठिन कार्य होता है। तब हम इस जनसंख्या का एक बड़ा समूह बना लेते हैं। ये समूह अनियत विधि (Random Method) द्वारा बनाये जाते हैं। इस बड़े समूह को ही प्रतिदर्श मान लिया जाता है तथा इसे समूह प्रतिदर्श का नाम दिया जाता है।

(B) असम्भाव्य प्रतिदर्श के प्रकार (Types of Non-Probability Sample)–असम्भाव्य प्रतिदर्श (Non-Probability Sample) निम्नलिखित चार प्रकार के होते हैं :

1. आकस्मिक प्रतिदर्श (Accidental Samples)
2. उद्देशीय प्रतिदर्श (Purposive Sample)
3. सम्पूर्ण प्रतिदर्श (Quota Sample)
4. निर्णीत प्रतिदर्श (Judgement Sample)

1. आकस्मिक प्रतिदर्श (Accidental Samples)–जब कभी भी किसी जनसंख्या (Population) में से जो भी आसानी से उपलब्ध हो जाता है तब ऐसे प्रतिदर्श को आकस्मिक प्रतिदर्श (Accidental Sample) का नाम दिया जाता है।

उदाहरणार्थ–रोहतक विश्वविद्यालय तथा उससे सम्बद्ध किसी भी महाविद्यालय के छात्रों की राय पूछनी हो तो ऐसे प्रतिदर्श आकस्मिक प्रतिदर्श कहा जाएगा।

2. उद्देशीय प्रतिदर्श (Purposive Sample)–कुछ शोध कार्यों में हमें किसी विशेष उद्देश्य के लिए प्रतिदर्श (Sample) की आवश्यकता होती है। उदाहरणार्थ, टी.वी. अधिक देखने पर छोटे बच्चों पर क्या प्रभाव पड़ेगा? बढ़ती महंगाई का छोटे बच्चों पर क्या प्रभाव पड़ेगा? इस शोध के लिए विशिष्ट समूहों की ही आवश्यकता पड़ती है अर्थात् छोटे बच्चों की। लेकिन यह जनसंख्या (Population) का प्रतिनिधि (Representative) नहीं होगा।

3. सम्पूर्ण प्रतिदर्श (Quota Sample)–यह भी वर्गबद्ध प्रतिदर्श (Stratified Sample) का ही एक रूप है। इसमें इकाइयों के चुनाव की विधि में ही अन्तर होता है। इसे भी वर्गों में बांटा जाता है। इस प्रतिदर्श का प्रयोग सामाजिक सर्वेक्षण (Social Surveys) और जनसंख्या सर्वेक्षण आदि में प्रयुक्त होता है। इसमें हम इकाइयों में स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होने वाले लक्षणों को ध्यान में रखकर वर्गीकृत करते हैं।

4. निर्णीत प्रतिदर्श (Judgement Sample)–इस प्रकार के प्रतिदर्श में शोधकर्ता अपने किसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु स्वयं निर्णीत इकाइयों के समूह का चयन करता है। अतः इसे निर्णीत प्रतिदर्श का नाम दिया जाता है।

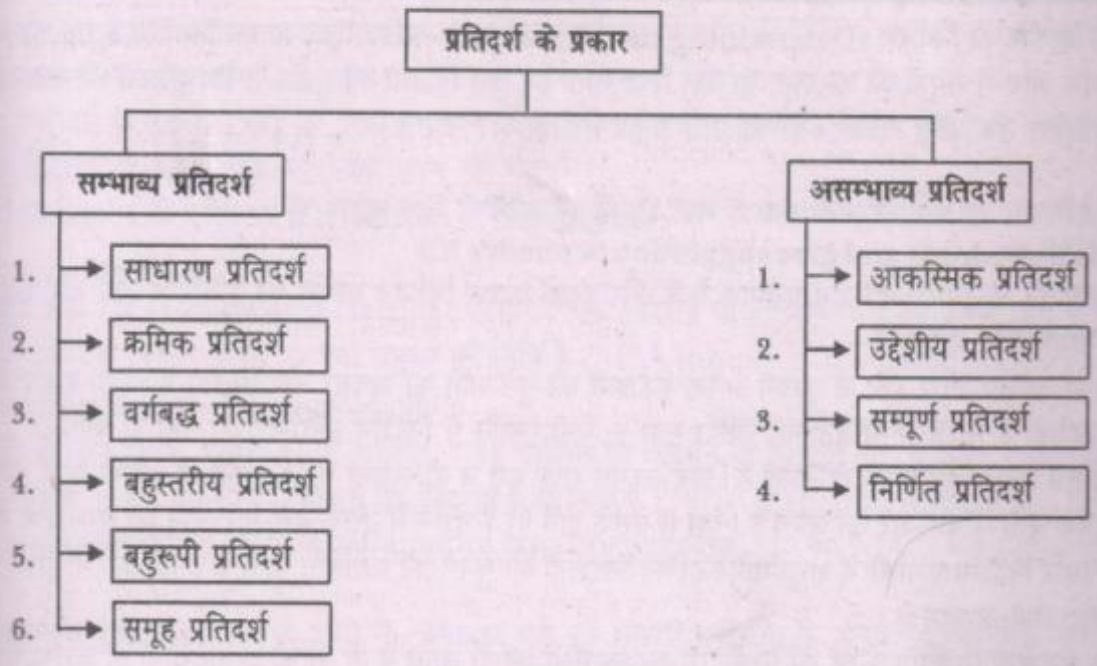

चित्र : प्रतिदर्श के प्रकार

प्रश्न 3. प्रतिदर्श की विश्वसनीयता तथा प्रतिदर्श के आकार पर संक्षिप्त टिप्पणी अथवा नोट लिखें।

अथवा

संक्षिप्त टिप्पणी अथवा नोट लिखें: प्रतिदर्श की विश्वसनीयता तथा प्रतिदर्श का आकार।

उत्तर–प्रतिदर्श की विश्वसनीयता (Reliability of Sample) –किसी भी प्रतिदर्श (Sample) का विश्वसनीय होना आवश्यक है। प्रतिदर्श की विश्वसनीयता निम्न ढंग से की जाती है :

1. **समान्तर प्रतिदर्श द्वारा :** इस तरीके से एक ही जनसंख्या के एक ही विधि द्वारा दो समान प्रतिदर्श (Sample) ले लेते हैं। [illegible] परीक्षण पर दोनों के मध्यमान (Mean) एवं विचलन (Deviation) को देख लिया जाता है। यदि दोनों में सार्थक अन्तर नहीं [illegible] तो प्रतिदर्श विश्वसनीय माना जाता है।

2. **उप-प्रतिदर्श विधि :** इस विधि के अन्तर्गत जो प्रतिदर्श लिया जाता है उसी में से एक उप-प्रतिदर्श (Sub-sample) लेकर [illegible] परीक्षण पर दोनों के मध्यमान (Mean) और विचलन (Deviation) देख लिये जाते हैं। इनमें सार्थक अन्तर न होने पर प्रतिदर्श [illegible] होता है।

3. **जनसंख्या से तुलना करते हुए :** यदि सम्पूर्ण जनसंख्या का किसी परीक्षण पर मध्यमान तथा विचलन ज्ञात हो तो प्रतिदर्श [illegible] तथा विचलन की उससे तुलना कर ली जाती है। यदि दोनों में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता तो यह प्रतिदर्श विश्वसनीय [illegible] जाएगा।

4. **सांख्यिकीय विधि द्वारा :** प्रतिदर्श की विश्वसनीयता की गणना उसकी सांख्यिकी के आधार पर भी की जा सकती है। इसके [illegible] प्रामाणिक त्रुटि (Standard Error of Means) को आधार बनाया जाता है। प्रतिदर्श जितना बड़ा होता है प्रामाणिक त्रुटि उतनी [illegible] होती है।

प्रतिदर्श का आकार (Size of Sample)–प्रयोगकर्ता या शोधकर्ता के सम्मुख सबसे बड़ा प्रश्न यही होता है कि प्रतिदर्श कितना [illegible] अर्थात् प्रयोग के लिए चुने गये प्रतिदर्श (Sample) में कितने सदस्यों को शामिल किया जाना चाहिए ताकि वह प्रतिदर्श जनसंख्या का शुद्ध रूप में प्रतिनिधित्व कर सके तथा प्राप्त परिणाम विश्वसनीय हो। किसी भी प्रयोग या शोध के परिणाम की शुद्धता प्रतिदर्श [illegible] आकार पर निर्भर करती है।

प्रतिदर्श के आकार (Size of Sample) का निर्धारण करने के लिए कोई एक ही नियम नहीं होता। लेकिन यह सच है कि [illegible] बड़ा प्रतिदर्श प्रयोग किया जा सकता हो, उतना बड़ा ही प्रतिदर्श प्रयोग करना चाहिए क्योंकि बड़ा प्रतिदर्श जनसंख्या का अच्छा [illegible] करता है, बड़े प्रतिदर्श से प्राप्त आंकड़े शुद्ध होते हैं, मापन त्रुटि भी न्यूनतम या शून्य हो जाती है तथा प्रामाणिक त्रुटि (Standard Error) भी कम होती है।

प्रतिदर्श के आकार का निर्धारण (Determining size of Sample)–प्रतिदर्श का आकार निर्धारित करना एक कठिन कार्य होता है। प्रयोगात्मक शोध में समूहों की समानता पर बल दिया जाता है। कुछ विद्वानों का सुझाव है कि प्रतिदर्श का आकार जनसंख्या का 10 से 20 प्रतिशत तक होना चाहिए। इसका कोई सैद्धान्तिक आधार नहीं है।

प्रश्न 4. अभिनति या पक्षपातपूर्णता क्या है तथा इसको दूर करने के लिए सुझाव दो।
(What is Biasedness and give suggestion to remove it.)

उत्तर– अभिनति से हमारा अभिप्राय पक्षपात से है और इसके कारण निदर्शन सम्पूर्ण का प्रतिनिधि नहीं बन पाता। निदर्शन में अभिनति के निम्नलिखित कारण हैं–

1. इसका आकार छोटा होने के कारण अनेक इकाइयों को चुने जाने का अवसर नहीं मिलता है। ऐसी इकाइयाँ महत्वपूर्ण हो सकती हैं जिन्हें सम्मिलित नहीं किया गया है, ऐसी स्थिति में निदर्शन प्रतिनिधिपूर्ण नहीं हो पाता।
2. यह तब भी अभिनतिपूर्ण हो जाता है। जब उद्‌गम सूची पूरी न हो अथवा बहुत पुरानी हो। कभी-कभी एक ही इकाई उद्‌गम सूची में बार-बार आ जाती है। ऐसे में उसके होने पर निदर्शन में उसके बार-बार आने की सम्भावना हो जाती है।
3. सुविचार निदर्शन प्रणाली में अनुसंधानकर्ता को निदर्शनों को चुनने की स्वतंत्रता होती है इसके कारण उसमें पक्षपात का प्रवेश होना आसान है।
4. जब इकाइयों के चयन करने की जिम्मेदारी कार्यकर्ताओं को दी जाती है तो उनकी असावधानी के कारण पक्षपात प्रवेश कर जाता है यदि इकाइयों में एकरूपता होगी तो इसकी संभावना कम हाती है।
5. यदि अध्ययन के लिए चुना गया विषय सजातीय, समान तथा आसान नहीं है तो सम्पूर्ण प्रतिनिधि निदर्शन का चुनाव कठिन हो जाता है।
6. सुविधानुसार निदर्शन प्रणाली में अनुसंधानकर्ता को छूट रहती है कि अपनी सुविधानुसार निदर्शन का चुनाव कर सकता है। ऐसे में निदर्शन समग्र का प्रतिनिधि नहीं होगा और उसमें पक्षपात का प्रवेश होना स्वाभाविक है।
7. यद्यपि दैव निदर्शन प्रणाली में सभी इकाइयों को समान रूप से चुने जाने का मौका मिलता है और इसके बाद यदि इसे त्रुटिपूर्ण तरीके से प्रयुक्त किया जायेगा तो अध्ययन में अपने आप ही दोष आ जायेगा।

उपरोक्त अभिनति को हटाने के लिए सुझाव निम्नलिखित हैं–

सुझाव (Some Suggestions)–

1. अनुसंधानकर्ता को अध्ययन विषय का पूरा ज्ञान होना चाहिए।
2. वस्तुनिष्ठता पर ध्यान दिया जाना चाहिए।
3. निदर्शन का आकार पर्याप्त होना चाहिए।
4. इसके कारणों को जानने के बाद इनके दुष्परिणामों से बचने रहने का प्रयास करना चाहिए।
5. निदर्शन की इस बात की जांच की जानी चाहिए कि उसमें प्रतिनिधित्व है या नहीं।
6. अनुसंधानकर्ता द्वारा चुनी हुई निदर्शन प्रविधि समस्या के अनुकूल होनी चाहिए।

प्रश्न 5. प्रतिदर्श या निदर्श को परिभाषित कीजिए तथा इसके मुख्य आधारों पर प्रकाश डालिए।
(Define sampling and throw light on its main bases.)

अथवा

प्रतिदर्श का क्या अर्थ है? इसके मुख्य आधारों को स्पष्ट कीजिए।
(What is the meaning of sampling? Clarify its main bases.)

उत्तर–समग्र में से कुछ इकाइयों के अध्ययन हेतु प्रतिनिधि के रूप में चुनना प्रतिदर्श या निदर्शन कहलाता है। निदर्शन का प्रयोग अति प्राचीनकाल से होता रहा है। दैनिक जीवन में निदर्शन विधि का प्रयोग प्रतिदिन किया जाता है। जैसे–गृहिणियां चावल पके हैं या नहीं, यह जानने के लिये कुछ चावलों का परीक्षण करके देखती हैं। इसी प्रकार से बाहर से गेहूं, चावल एवं बाजरा आदि खरीदते समय बोरियों में से मुठ्ठी भर दाने लेकर उनकी जाँच करते हैं, अथवा आम खरीदते समय टोकरे में से आम चखकर सभी आमों के बारे में निर्णय लेते हैं। केवल एक बूँद रक्त की परीक्षा कर डॉक्टर रोगी के रक्त के बारे में निष्कर्ष निकाल लेता है। इस प्रकार निदर्शन का प्रयोग दैनिक जीवन में आम आदमी के द्वारा व्यापक रूप से किया जाता है।

अथवा

एक अच्छे या श्रेष्ठ निदर्शन या प्रतिदर्श के अन्तर्गत कौन-कौन-सी मुख्य विशेषताओं का होना आवश्यक है? उल्लेख कीजि

उत्तर–निदर्शन या प्रतिदर्श जितना पक्षपात रहित होगा, अध्ययन विषय से सम्बन्धित उतने ही महत्त्वपूर्ण होंगे। इस सम्ब में **पी.बी. यंग (P.V. Young)** ने लिखा है कि , **"निदर्शन का आकार ही उसके प्रतिनिधि होने की गारन्टी नहीं होती है। सम्पू रूप से चुना गया अपेक्षाकृत छोटे आकार का निदर्शन दोषपूर्ण रूप से चुने गये बड़े आकार के निदर्शन से अधिक विश्वसनीय है।"**

निदर्शन या प्रतिदर्श किसी भी अनसुंधान कार्य की आधारशिला है। यह आधारशिला जिनती सुदृढ़ होगी, अनुसंधान के परि उतने ही विश्वसनीय व परिशुद्ध होंगे। प्रतिचयन को तभी उपयुक्त माना जा सकता है जब सम्पूर्ण समष्टि का सही प्रतिनिधित्व हो

पार्टेन (Partane) के अनुसार, "एक सर्वेक्षण में वह निदर्शन उत्तम होता है जो कुशलता, प्रतिनिधित्व, विश्वसनीयता त लोच की आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। अनावश्यक व्यय बचाने की दृष्टि से निदर्शन को पर्याप्त छोटा होना चाहिये तथा अ निदर्शन त्रुटि को दूर रखने के लिये इसे पर्याप्त बड़ा ही होना चाहिये।"

निदर्शन द्वारा सामाजिक घटनाओं के बारे में हमारे निष्कर्ष कितने यथार्थ एवं वैज्ञानिक होंगे, यह बात निर्भर करती है–ह निदर्शन की उत्तमता एवं समग्र की प्रतिनिधित्वपूर्णता पर। अतः अध्ययन की सफलता के लिये यह आवश्यक है कि हमारे निद या प्रतिदर्श में निम्नलिखित विशेषताओं का समावेश हो।

1. समग्र का प्रतिनिधित्व (Representation of Universe)–एक श्रेष्ठ निदर्शन की सर्वप्रथम विशेषता यह है कि व समग्र का प्रतिनिधित्व करे। ऐसा तभी समभव हो सकता है, जब समग्र की प्रत्येक इकाई को निदर्शन में सम्मिलित होने का स अवसर प्राप्त हो। **लुण्डबर्ग (Lundbarg)** का मत है कि प्रतिनिधित्वपूर्ण निदर्शन दो बातों पर निर्भर करता है :

(i) अध्ययन तथ्यों में कितनी मात्रा में समानता पायी ज़ाती है।

(ii) निदर्शन के चुनाव में किस प्रणाली को अपनाया जाता है।

श्रेष्ठ निदर्शन प्राप्त करने के लिये यह आवश्यक है कि समग्र की इकाइयों में एकरूपता लायी जाये तथा निदर्शन का चुन इस प्रकार किया जाये कि प्रत्येक इकाई को निदर्शन में चुने जाने की स्वतंत्रता एवं समान अवसर प्राप्त हों।

2. निष्पक्षता (Free from Bias)–एक श्रेष्ठ निदर्शन को पक्षपात एवं मिथ्या-सुझाव से स्वतंत्र होना चाहिये अन्यथा व प्रतिनिधित्वपूर्ण होने का दावा नहीं कर सकता। निदर्शन का चुनाव करते समय इस बात का ध्यान रहे कि वह अनुसंधानकर्ता की रुचि, स्वार्थ, सुविधा एवं स्वेच्छा पर आधारित न हो, न ही उसमें पूर्व-धारणा या अनुसंधानकर्ता की असावधानी का कोई प्रभाव हो

3. उद्देश्यों के अनुरूप (According to Aims)–एक श्रेष्ठ निदर्शन वह है जो अनुसंधान के उद्देश्यों के अनुकूल हो। उदाह के लिये, यदि हम पानीपत नगर के कपड़ा बनने वाले श्रमिकों की आर्थिक-सामाजिक स्थिति का अध्ययन करना चाहते हैं और ह निदर्शन में हमने ऐसे श्रमिकों का चयन किया है जो कपड़े बुनने का कार्य नहीं करते हैं तो हमारा निदर्शन व्यर्थ हो जायेगा। अ उत्तम निदर्शन के लिये यह आवश्यक है कि वह अनुसंधान उद्देश्य के अनुरूप हो।

4. व्यावहारिक अनुभवों पर आधारित (Based on Practical Experience)–एक उत्तम निदर्शन का चयन करने के लि हमें अन्य अनुभवी अध्ययनकर्ताओं के अनुभवों का भी उपयोग करना चाहिये। यदि जिस क्षेत्र का हम अध्ययन कर रहे हैं, उस पूर्व में भी किसी ने अध्ययन किया है तो उससे सम्पर्क कर उसके अनुभवों का लाभ उठाना चाहिये। इसी प्रकार से इसी प्रकृति के यदि कोई अन्य अनुसंधान किये गये हों तो उनके प्रतिवेदनों एवं निदर्शन आधारों का लाभ भी उठाया जा सकता है।

5. साधनों के अनुरूप (According to Resources)–एक प्रतिनिधित्वपूर्ण निदर्शन वह है जो अनुसंधानकर्ता के प उपलब्ध साधनों के अनुरूप हो। साधनों को ध्यान में रखकर ही निदर्शन की संख्या, प्रकार और चुनाव-विधि का निश्चय किया जा चाहिये। साधनों के अनुरूप निदर्शन में होने पर उसमें पक्षपात आने की सम्भावना रहती है।

6. स्वतंत्रता (Independence)–समग्र की सभी इकाइयां आपस में स्वतंत्र होनी चाहिये अर्थात् निदर्शन में किसी इका का सम्मिलित होना किसी अन्य इकाई के सम्मिलित होने पर निर्भर न हो। दूसरे शब्दों में, समग्र की प्रत्येक इकाई को निदर्शन चुने जाने का स्वतंत्र एवं समान अवसर प्राप्त होना चाहिये।

7. पर्याप्त आकार (Adequate Size)–श्रेष्ठ निदर्शन के लिये यह आवश्यक है कि निदर्शन की इकाइयों की संख्या पर्या हो। निदर्शन में जितनी अधिक इकाइयां होंगी, परिणामों में उतनी ही अधिक परिशुद्धता आने की सम्भावना रहेगी, यद्यपि सदैव ह यह आवश्यक नहीं है कि निदर्शन का आकार निदर्शन के प्रतिनिधित्वपूर्ण होने की गारन्टी देता है। फिर भी यदि हमें दस हजार छात्र

स्टीफन का मत है कि नियमित जनगणनाओं का आयोजन करने से पूर्व सदैव ही निर्दशन का प्रयोग किया जाता रहा है। सन् से पहले सामाजिक अनुसंधान में निदर्शन प्रणाली का प्रयोग बहुत ही कम हुआ करता था।

बाउले ने लन्दन में सर्वप्रथम घरों का अध्ययन करने के लिये दैव निदर्शन पद्धति का प्रयोग किया था। आज तो अनुसंधान में निदर्शन का प्रयोग एक आवश्यक चरण बन गया है।

प्रतिदर्श या निदर्शन की परिभाषा (Definition of Sampling)–विभिन्न विद्वानों ने निदर्शन को इस प्रकार से परिभाषित है :

1. **गुडे तथा हॉट (Goode and Hatt)** के अनुसार, **"एक निदर्शन या प्रतिदर्श जैसा कि इसके नाम से ही स्पष्ट होता है, कि एक विस्तृत समूह का एक लघुत्तर प्रतिनिधि है।"** ("A sample as the name applies, is a smaller representation of a large whole.")
2. **पी.वी. यंग (P.V. Young)** के अनुसार, **"एक सांख्यिकीय निदर्शन या प्रतिदर्श सम्पूर्ण समूह अथवा योग का ही लघुकृत आकार का चित्र है जिससे कि निदर्शन लिया गया है।"** (" A statistical sample is a miniature picture or cross section of the entire group or aggregate from which the sample is taken. ")
3. **बोगार्डस (Bogardus)** के शब्दों में, **"निदर्शन एक पूर्व निर्धारित योजना के अनुसार इकाइयों के एक समूह में से निश्चित प्रतिशत का चयन है।"** ("Sampling is the selection of certain percentage of a group of items according to a predetermined plan.")
4. **सिम्पसन तथा काफका (Simpson and Kafka)**–**"एक प्रतिदर्श या निदर्शन समग्र का वह अंश है जिसका चयन हम अनुसंधान के उद्देश्य के लिए करते हैं।"** ("A sample is that part of the universe which we select for the purpose of investigation.")
5. **सिन पाओ यंग (Hsin Pao Young)** के अनुसार, **"एक सांख्यिकीय निदर्शन सम्पूर्ण समूह का प्रतिनिधित्व अंश है।"**
6. **पार्टेन** के अनुसार, **"एक निश्चित संख्या में व्यक्तियों, मामलों या परीक्षणों की समग्र विशेष में से निकालने की प्रक्रिया या पद्धति अथवा अध्ययन हेतु एक समग्र समूह में से एक भाग को चुनना निदर्शन पद्धति कहलाता है।"**
7. **जॉन गाल्टुंग** के अनुसार, **"अध्ययन के लिये चुनी गई इकाइयों का समूह सम्भावित इकाइयों के सम्पूर्ण समूह का उप समूह है। इस उप-समूह को प्रतिदर्श या निदर्शन तथा सम्पूर्ण को एक समग्र के नाम से संबोधित किया जाता है।"**

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि निर्दशन बहुत बड़े समूह का एक छोटा प्रतिनिधि होता है जिसमें समूह के समस्त लक्षण विद्यमान होते हैं। प्रतिनिधि इकाइयों के अध्ययन द्वारा प्राप्त निष्कर्षों को समस्त समग्र अथवा समूह पर लागू किया जाता है।

प्रतिदर्श या निदर्शन के आधार (Basis of Sampling)–प्रश्न यह उठता है कि निदर्शन में थोड़ी सी इकाइयों को बहुत बड़े समूह का प्रतिनिधि कैसे मान लिया जाता है, इसके मूल आधार निम्नलिखित हैं–

1. **समग्र की सजातीयता (Homogeneity of Universe)**–ऊपरी तौर पर हमें व्यक्तियों एवं तथ्यों में बहुत अधिक भिन्नताएं दिखायी देती हैं, यहाँ तक कि कारखाने में बनने वाली कोई दो वस्तुएँ भी पूर्णतया समान नहीं होतीं और दो जुड़वा भाई भी समान नहीं होते, फिर भी यदि हम ध्यानपूर्वक करें या देखें तो ज्ञात होगा कि ऊपरी तौर पर दिखायी देने वाली इस विविधता में अन्तर्निहित एकता अथवा समानता है। उदाहरण के लिये सभी मनुष्यों की शारीरिक बनावट में ऊपरी तौर पर अनेक विभिन्नताएं दिखायी देती हैं, फिर भी शारीरिक दृष्टि से कई समानताएं विद्यमान हैं। यही कारण है कि निदर्शन को समग्र का प्रतिनिधि मान लिया जाता है। इस सन्दर्भ में **लुण्डबर्ग (Lund Burg)** ने लिखा है, "यदि तथ्यों में अत्यधिक एकरूपता पाई जाती है अर्थात् सम्पूर्णतथ्यों में विभिन्न इकाइयों में अन्तर बहुत कम है तो सम्पूर्ण में से कुछ या कोई इकाई समग्र का उचित प्रतिनिधित्व करेगी।" इस प्रकार निदर्शन-विधि इस मान्यता पर आधारित है कि विविधताओं में भी समानताएं अन्तर्निहित होती हैं, जिन्हें सामाजिक घटनाओं के अध्ययन में देखा जा सकता है।

2. **प्रतिनिधित्वपूर्ण चुनाव की सम्भावना (Possibility of Representative Selection)**–निदर्शन इस मान्यता पर आधारित है कि सम्पूर्ण समूह में थोड़ी-सी इकाइयों का चयन इस प्रकार किया जा सकता है कि वे समग्र का प्रतिनिधित्व कर सकें, किन्तु इसके लिये यह आवश्यक है कि निदर्शन की इकाइयों में वे सभी विशेषताएं हों जो मूल समग्र में हों।

का अध्ययन कराना हो और उनमें से केवल दस छात्रों को ही हम प्रतिनिधि निदर्शन के रूप में चुनते हैं तो यह अपेक्षा नहीं की जा सकती है कि वे सभी छात्रों की विशेषताओं का उचित प्रतिनिधित्व करेंगे। निदर्शन का आकार ही नहीं, वरन् उसके चुनाव का तरीका भी उपयुक्त होना चाहिये। इस सन्दर्भ में **पी.वी.यंग** ने लिखा है, "निदर्शन का आकार उसकी प्रतिनिधित्वकता का आवश्यक बीमा नहीं है। सापेक्षिक रूप में उचित प्रकार से चुने गये छोटे निदर्शन अनुपयुक्त तरीकों से चुने हुए बड़े निदर्शनों की अपेक्षा अधिक विश्वसनीय हो सकते हैं।"

8. सामान्य ज्ञान तथा तर्क पर आधारित (Based on General Knowledge and Logic)—एक उत्तम निदर्शन वह है जो सामान्य ज्ञान एवं तर्क पर आधारित हो। निदर्शन को तर्क की कसौटी पर खरा उतरना चाहिये। केवल सूत्रों और नियमों का अन्धानुकरण करने से ही आदर्श निदर्शन का चुनाव नहीं किया जा सकता। नियमों एवं सूत्रों के साथ-साथ निदर्शन के चुनाव में अनुसंधानकर्ता को तर्क एवं सामान्य ज्ञान का भी प्रयोग करना चाहिये।

9. सजातीयता (Homogeneity)—निदर्शन के अन्तर्गत चुनी गई इकाइयों में अत्यधिक विरोधी विशेषताएं नहीं मिलनी चाहिये। निदर्शन के अन्तर्गत आने वाली इकाइयां भी लगभग समान प्रकृति की होनी चाहिये। ऐसे निदर्शन ही अधिक वैज्ञानिक निष्कर्ष में सहायक होते हैं।

10. सामंजस्यता (Adjustment)— अनुसंधानकर्ता को ऐसे निदर्शन का चुनाव करना चाहिये जो उसकी समस्या या अध्ययन से सम्बन्धित हो। अतः जिन इकाइयों से हमारी समस्या प्रभावित होती है उन्हीं का चुनाव करना चाहिये। ऐसा नहीं होना चाहिए कि समस्या तो उद्योगपतियों से सम्बन्धित है और प्रतिदर्श निदर्शन अध्यापकों का ले बैठे।

11. अध्ययन की धुरी (Axis of Study)—शोधकर्ता जो भी कार्य करता है वह सम्पूर्ण कार्य निदर्शन पर ही आधारित होता है अतः निदर्शन एक ऐसी धुरी है जिसके आधार पर अध्ययन किया जाता है।

पार्टेन ने एक श्रेष्ठ निदर्शन की विशेषताओं का उल्लेख करते हुए लिखा है, "एक सर्वेक्षण में वह निदर्शन उत्तम होता है जो सुलभता, प्रतिनिधित्व, विश्वसनीयता तथा लोच की आवश्यकता की पूर्ति करता हो। अनावश्यक व्यय बचाने की दृष्टि से निदर्शन यथासम्भव छोटा होना चाहिये तथा असह्य त्रुटि को दूर करने के लिये इसे पर्याप्त बड़ा भी होना चाहिये।"

❐

प्रश्न 3. निदर्शन या प्रतिदर्श की चुनाव प्रक्रिया का उल्लेख कीजिए।

अथवा

निदर्शन या प्रतिदर्श का चुनाव करते समय हमें कौन-कौन सी प्रक्रिया से गुजरना पड़ता है? स्पष्ट कीजिए।

उत्तर– निदर्शन या प्रतिदर्श का चुनाव भी उत्तम निदर्शन का एक पक्ष है। यह एक तकनीकी प्रक्रिया है जिसके लिये अनुभवी व प्रशिक्षित व्यक्तियों की आवश्यकता होती है। निदर्शन या प्रतिदर्श के चुनाव से हमें निम्नलिखित प्रक्रिया से गुजरना पड़ता है :

1. समग्र का निर्धारण (Determination of Universe)—जिस समूह या क्षेत्र से निदर्शन का चुनाव किया जाता है, उसे समग्र कहते हैं। निदर्शन निकालने का सर्वप्रथम चरण है—समग्र का तय करना। समग्र दो प्रकार के हो सकते हैं : **निश्चित** और **अनिश्चित**। निश्चित समग्र की इकाइयों की संख्या एवं गांव तथा नगर की जनसंख्या एवं भौगोलिक सीमा निश्चित होती है। एसे समग्र की इकाइयों को हम निश्चित रूप से जान सकते हैं, लेकिन कई बार समग्र की इकाइयां अनिश्चित होती है। उदाहरण के लिये, लक्स साबुन का प्रयोग करने वाले एवं सरिता के पाठकों की संख्या अनिश्चित है। अनिश्चित समग्र की भौगोलिक सीमा भी नहीं होती। समग्र की अनिश्चितता का कारण इसकी निरन्तर परिवर्तनशीलता है। अतः निदर्शन के चुनाव से पूर्व हमें समग्र का निर्धारण कर लेना चाहिये। हमारा समग्र कोई भी भौगोलिक इकाई, गांव, नगर, संस्था, समुदाय एवं सामाजिक घटना हो सकता है।

2. निदर्शन की इकाई का निर्धारण (Determination of Sampling Unit)—समग्र के निर्धारण के बाद दूसरा चरण निदर्शन की इकाइयों को तय करता है। हमें यह तय करना होता है कि हमारे निदर्शन की इकाई क्या होगी। यह इकाई व्यक्ति, संस्था, परिवार, समूह, व्यवसाय और निवास-क्षेत्र आदि कुछ भी हो सकती है। निदर्शन की इकाइयां चार प्रकार की होती हैं :

(i) भौगोलिक इकाई, जैसे—एक राज्य, जिला नगर, गांव एवं वार्ड आदि।

(ii) भवन सम्बन्धी इकाई, जैसे—परिवार, स्कूल, क्लब, चर्च एवं समिति आदि।

(iii) समूह सम्बन्धी इकाई, जैसे—परिवार, स्कूल, क्लब, चर्च एवं समिति आदि।

(iv) व्यक्तिगत इकाई, जैसे—व्यक्ति, स्त्री, पुरुष, श्रमिक, छात्र, अध्यापक एवं कृषक आदि।

इकाई सदैव स्पष्ट, भ्रमरहित, निश्चित एवं विषय के अनुरूप होनी चाहिये जो अध्ययनकर्ता को आसानी से उपलब्ध हो जाये।